



श्री सुविती नागरी मंडार, पुस्तक
बीकानेर

दम्पती परामर्श ३३११

का
(सुत्तन वृहत् के रहस्य)

डा० मेरी कारनाकेल, स्लोवा की
Radical Motherhood का
अनुवाद

१९३३-३४ ई. १९३५

अनुवाद,

जीवन्त कलकत्ता

• (केन्द्रीय), दिल्ली,

विन्नी कल

कलकत्ता रोड, कलकत्ता ।



विषय सूची

१ प्रेमी की मरुत कल्पना	...	१
२ औन्मर्ब पूर्ण परिस्थिति में	...	८
३ कल्पना का द्वार	...	१६
४ आधी माता की कल्पना	...	२८
५ आधी माता की मुक्त कल्पना	...	३४
६ आधी माता के संकट	...	३८
७ आधी पिता की कल्पना	...	४५
८ आधी पिता की मुक्त कल्पना	...	४९
९ आधी पिता के संकट	...	५३
१० आधी माता के रात्रीरिक कट	...	५७
११ आधी पिता की औधिक कठिनाई	...	५९
१२ मर्ब और कल्पना	...	६५
१३ मर्ब का औधिक विचार	...	८९
१४ मर्ब कल्पना पर माता का प्रभाव	...	१०९
१५ पिता की विभिन्न ओलिया	...	११
१६ मर्ब और औन्मर्ब	...	१५
के औधिकार	...	१९
के कल्पना	...	२३
की कल्पना	...	२७

प्रियता का सन्तान कालिए इच्छुक होने स्वाभाविक है।
 जिन का विचार इस के विरुद्ध है, जो प्रेम को केवल स्वा-
 पूर्ण वस्तु समझते हैं उन्हें वास्तव में कुछ कोटि के सच्चे प्रेम
 का ज्ञान ही नहीं। दम्पती के सत्य और गूढ़ प्रेम की स्वाभाविक
 वृत्ति, अपने अनुपम सुन्दर अस्तित्व को पारस्परिक सहायता और
 प्रयत्न द्वारा और भी अधिक सुन्दर, सम्पूर्ण, मोहक और उत्कृष्ट
 जीवनों के रूप में प्रकट कर के अपनी यथार्थता का प्रमाण देने की
 ओर होती है।

हमारी अन्तःकरण की कल्पनाओं और सांसारिक परिस्थितियों
 में बहुत अधिक अन्तर रहता है। ये बात, सांसारिक बाधाएँ प्रायः
 प्रेमियों की आन्तरिक इच्छाओं के मार्ग में रुकावट बन जाती हैं।
 कभी कभी तो उन की कामनायें परिस्थितियों द्वारा इतनी अधिक
 कुचल दी जाती हैं कि प्रेमियों के आचरण और व्यवहार द्वारा
 उन के अस्तित्व का अनुमान करना भी कठिन हो जाता है। परन्तु
 यह बात माननी ही पड़ेगी कि अपने जीवनों की गृहस्था को
 भविष्य से सम्बद्ध रखने की प्रबल इच्छा सभी स्वस्थ, सुशिक्षित
 और सभ्य प्राणियों के स्वर्गीय गूढ़ प्रेम में अन्तर्हित रहती है।
 - ५ - वह लोगों का साधारण विश्वास है कि स्त्रियों में विवाह की
 इच्छा केवल सन्तान प्राप्ति के उद्देश्य से होती है। यद्यपि इस कथन

प्राप्त रह है। इन अवकारों के द्वारा पुरुषों का प्रवृत्त सदा अपने सामाजिक स्थिति और शक्तिके अनुसार अधिक से अधिक सुन्दर सुशील और गुणवती स्त्री चुनने की ओर रही है। यह इसी प्रवृत्ति का परिणाम है कि उच्च और मध्यम श्रेणी के व्यक्तियों की शारीरिक और मानसिक अवस्था, गन्दी कोठरियों में रहने वाले निम्न श्रेणी के उनके निर्धन और अशिक्षित व्यक्तियों से कहीं अधिक अच्छी है जहाँ मातायें बिना किसी इच्छा और उद्देश्य के और पिता अनजाने में, केवल अपने इन्द्रियसुख की तृप्ति के अपराध स्वरूप, सन्तान उत्पन्न करते हैं।

कष्ट और पूजा के इन निवास स्थानों की ओर से कुछ देर लिए हमें अपने विचारों को हटा लेना होगा। क्योंकि इस समय हम मुख्यतः उन सम्पन्न, सुन्दर, स्वस्थ वृत्तियों के विषय विचार करना चाहते हैं जिन्हें सुखमय सामाजिक परिस्थिति जीवन के स्नेहमय साथी प्राप्त हैं और जिन्हें सुधार के मार्ग पर चल कर उत्थिति करने का अवकार है।

विवाह के पश्चात् शीघ्र ही, दो बार मास ठहर कर, अर्थात् अपनी प्रिय पत्नी के शारीरिक सौन्दर्य की भिन्ना तथा आ परिस्थितियों के विचार से कुछ अधिक मास ठहर कर प्रेम सु

मान के गर्भ में लिपे रहने के फलस्वरूप पिता का स्वयं रूप वह मनुष्य शरीर प्रकट जगत् में प्रकट होता है। जब जन्म भी अनेक शरीरिक मूल्यों से युक्त होने के कारण अत्यधिक विन्म और सम्पन्न के विना इस का अस्तित्व अधिष्ठान आरंभित ही रहता है। जन्म, जो कुछ भी हो इतनी शक्तियाँ बहुत अधिक अभिहित हैं परन्तु फिर भी प्रेमोद्धारों की प्रकृति और उस से सम्बन्धित स्वर्गों के सौन्दर्य के आचरण के पीछे, शरीर विज्ञान के नियमों के अनुसार रासायनिक क्रिया द्वारा, अनुजों और परमाणुओं के सम्मिश्रण और विकास से मानव शरीर की उत्पत्ति अवश्य ही आश्चर्यकारी वस्तु है। सन्तति के रूप में दम्पती पारस्परिक प्रेम के प्रमाणरूप इस स्वर्गीय, सर्वोत्कृष्ट, पवित्र उपहार को एक दूसरे के प्रति अर्पण करते हैं जिस में उन्हीं के समान अपने अस्तित्व से नवीन सृष्टि करने की ईश्वरीय शक्ति वर्तमान रहती है। इस पुस्तक में केवल स्वस्थ, प्रेममय और जीवन की सम अवस्था में स्थित समाज को अपनी स्थिति, सुरक्षित तथा अधिक उत्कृष्ट बनाने के लिए कुछ कहा जायगा। जिन लोगों के विवाह सम्बन्ध भाग्य की क्रूरता से अथवा उन के संरक्षकों के दोष से दुःखमय और जीवन के लिए बोझ स्वरूप बन चुके हैं उन के लिए सिवाय सहानुभूति प्रकट करने के हम कुछ नहीं कर सकते। यह पुस्तक केवल उन्हीं लोगों के लिए लिखी जा रही है जो जीवन के पथ पर अपने स्नेहमय साथी के साथ सुख पूर्वक विन गुजार रहे हैं और जिन के कन्धों पर मनुष्य जीवन के सब से अधिक महत्वपूर्ण कार्य—मायी संसृति को संसारयात्रा के लिए अधिक समर्थ बनाने—का बोझ रहता गया है।

१। आज यह कल्प और विविध मेरी के पुत्र लोग यह कल्प यह सम्मानोपधि के लिए इच्छुक नहीं होते। जिस समय मैंने वे अपनी अनेकों की इस के योग्य और अनुकूल नहीं बनाये। यह युवक जिस के इसमें अपनी बन्नी के लिए प्रेम है, कभी उसे सम्मानोपधि के कार्य में आकांक्षिक रूप से नहीं संलग्नता जबकि जो अपनी सन्तान का सम्मान चाहता है, उस समय तक जब तक कि उस की स्त्री इस बात को सम्मानने में असमर्थ है या वह स्वयं प्रसव के समय आवश्यक सुविधाएँ नहीं जुटा सकना कभी इस काम में हाथ न डालेगा। जिसने मेरे और शोक का विषय है कि असंख्य बालक बिना किसी चरेख के केवल माता पिता की बेपरवाही के कारण जन्म लिये चले जाते हैं और वे ही सम्माने अनुपम भाति का कर्तक बन कर सदा यह और निर्मला का जीवन व्यतीत करती हैं। क्या ही अच्छा हो यदि विवाह के समय ही दम्पति विचार पूर्ण-भाव से एक-दूसरे में अपने सम्बन्ध के परिणाम स्वरूप आधी सन्तान के विषय में कुछ नियम मिश्रित कर लें बजाय इस के कि अपने सम्बन्ध के चरेख और परिणाम से पूर्णतया परिचित होते हुए भी वे केवल संकोच के कारण चुप रह कर बिना किसी चरेख और मिश्रण के परिवार की संख्या वृद्धि कर जीवन को चरेख बनाने लें।





अधिक संकुच और संकीर्ण हो गया है कि प्रकृति के सद्व्यक्त का समय रात्रि के कुछ घंटों में ही निमग्न हो गया है। वर्तमान कमरों के बीच बड़े-बड़े और बड़ी बस्तियों में अपनी मुगल के लिए प्रकृति के अंश में एकत्रित होकर रहने निकल आसन्न हो गया है। इन के लिए यदि कहीं एकत्रित और निरन्तरता प्राप्त है तो वह रात्रि के अन्धकार, कुछ, कुछ कमरों में ही। प्रेम के अन्धकार में बड़ी शक्तिशाली के संकट आदि के लोभों के बिचार ही अधिक ऊंचे और गम्भीर हैं। स्वर्गीय प्रीति की कामना के अंश से प्रकृति के पवित्र-सम्पन्न की आयोजना के बिचार में वे कहते हैं कि इन के लिए पुण्य और अज्ञानों से मुक्ति मिल सकान, अथवा निकल, होने चाहिए। प्रेम की वृत्तियों को अंकुश करने के लिए उपयुक्त समय रात्रि का अन्धकार नहीं किन्तु दिन का प्रकार है। समाज की इस पवित्र, और कृत्रिम अवस्था में आज भी कुछ भाग्यवान् व्यक्ति हैं जो सुखी, हवा और प्रकाश की उपस्थिति में शारीरिक आरक्षण के महत्त्व, पवित्रता और भावुर्ब रस अनुभव कर सकते हैं। यह प्रकृति सिद्ध ही है कि प्रकाश और प्राकृतिक अवस्थाओं में प्रणयीमुगल के अन्धकार से त्रिभुज संस्थानों ने जीवन पाया है वे अधिक स्वस्थ और सुन्दर हैं। प्रकृति के आचार्य निरोक्षण से यह स्पष्ट विदित हो जाता है कि गर्माधान के लिए सब से अधिक उपयुक्त और अधिक समय बसंत ऋतु है जिस समय वायु मंदक सब शीतोष्ण तथा सुहावना होता है और स्वर्ग प्रकृति भी अपने पूर्ण जीवन में निकट हो आती है पर अपनी कल्पना का साथ देती है।

विक संकुच और संकीर्ण हो गया है कि दम्पति के सहवास का जब रात्रि के कुछ घंटों में ही निषिद्ध हो गया है। वर्तमान कालों के जीव जड़ों और पत्थर कस्तियों में प्रणवी युगल के लिए कृति के अन्त में एकान्तवास प्राप्त करना निश्चय असम्भव हो गया है। इन के लिए यदि कहीं एकान्तवास और निस्तब्धता प्राप्त हो वह रात्रि के अन्धकार युक्त, कष्ट कमरों में ही। प्रेम के हृदय में बड़ी शताब्दी के संस्कृत साहित्य के लेखकों के विचार ही अधिक ऊँचे और गम्भीर हैं। स्वर्गीय प्रतिमा की कामना के उद्देश्य से दम्पति के पवित्र सम्बन्ध की आयोजना के विषय में वे लिखते हैं कि इन के लिए पुण्य और छाताओं से सुसज्जित मकान, अथवा निकुञ्ज होने चाहिए। प्रेम की कृतियों को प्रकट करने के लिए उपयुक्त समय रात्रि का अन्धकार नहीं किन्तु दिन का प्रकाश है। समाज की इस पवित्र और कृत्रिम अवस्था में आज भी कुछ भाग्यवान् व्यक्ति हैं जो सुखी, हवा और प्रकाश की उपस्थिति में शारीरिक आलिंगन के महत्त्व, पवित्रता और माधुर्य रस अनुभव कर सकते हैं। यह प्रकृति सिद्ध ही है कि प्रकाश और प्राकृतिक अवस्थाओं में प्रणवीयुगल के सम्बन्धन से श्रम सम्पत्तियों में जीवन पाया है वे अधिक स्वस्थ और सुन्दर हैं। प्रकृति के आपारम्य गिरोहण से वह स्पष्ट विदित हो जाता है कि गर्भावस्था के लिए सब से अधिक उपयुक्त और उचित समय गर्भवती है जिस समय शिशु मँडल का शीतोष्ण तथा सुहावना होता है और स्वयं प्रकृति भी अपने पूर्व जीवन में बहुत हो प्रसन्न हो कर गर्वनी कक्षा का हाथ फैला देती है।

100

पर पूर्व विधान की है कि गर्भावस्था के समय दम्पति की शरीर-
 रोग और आन्तरिक अवस्था तथा प्राकृतिक परिस्थिति का अध्ययन
 आवश्यक प्रमाण प्रकृत है। प्रमाण स्वरूप हम देख सकते हैं कि
 एक ही दम्पति की स्वस्थ और रोगावस्था में उत्पन्न संतानों में
 फिस्मा अन्तर रहता है, पहली की अपेक्षा दूसरी कितनी निम्न
 होती है। फोरेल महोदय ने अपनी पुस्तक Sexual Question
 में इस विषय पर अच्छा प्रकारा बतला है। आप के विचार में
 अन्वयकार में गर्भावस्था करने से संतान पर अवश्य बुरा प्रभाव
 प्रकृत है। इस के अतिरिक्त आप ने स्विटजरलैंड की १९००
 ई० की जन संख्या पर विचार कर के पागलों की उत्पत्ति
 के विषय में एक सत्य सिद्धान्त बूझ निकाला है। आप का कहना
 है कि स्विटजरलैंड में वर्ष भर में ऐसे दो समय आते हैं जिस
 समय कि अधिकतर पागल बालक जन्म ग्रहण करते हैं और वे
 दोनों समय उस देश में होने वाले दो मेलों—कार्निवाल और विन्टेज—
 (जिन में शराब की अत्याधिक खपत होती है) के ठीक नी नी
 आस पड़ता प्रकृत है। स्विटजरलैंड के उन प्रांतों में जहां कि
 शराब खपत की जाती है इस बात का प्रमाण और भी अधिक
 स्पष्ट रूप में मिलता है। वहां विन्टेज के मेले के नौ मास पश्चात्
 उत्पन्न होने वाले बालकों में से एक बड़ी संख्या पागलों की होती है
 परन्तु अन्य समयों में मुन्डिल से कभी कोई पागल बालक जन्म
 ग्रहण प्रकृत है।

गर्भावस्था के अवश्य से दम्पति के विचार का समय सदा नि-
 विचर करना शुभ नहीं और आप विचार कर लेने पर भी

पर पूर्ण विश्वास भी है कि गर्भाधान के समय दम्पति की शारीरिक और मानसिक अवस्था तथा प्राकृतिक परिस्थिति का सन्तान पर गहरा प्रभाव पड़ता है। प्रमाण स्वरूप हम देख सकते हैं कि एक ही दम्पति की स्वस्थ और रुग्णावस्था में उत्पन्न सन्तानों में कितना अन्तर रहता है, पहली की अपेक्षा दूसरी कितनी निष्कृष्ट होती है। फोरेल महोदय ने अपनी पुस्तक Sexual Question में इस विषय पर अच्छा प्रकारा डाला है। आप के विचार में जन्मकार में गर्भाधान करने से सन्तान पर अवश्य बुरा प्रभाव पड़ता है। इस के अतिरिक्त आप ने स्विटजरलैंड की १९०० ई० की जन संख्या पर विचार कर के पागलों की उत्पत्ति के विषय में एक सत्य सिद्धान्त बूंद निकाला है। आप का कहना है कि स्विटजरलैंड में वर्ष भर में ऐसे दो समय आते हैं जिस समय कि अधिकतर पागल बालक जन्म ग्रहण करते हैं और वे दोनों समय उस देश में होने वाले दो मेलों—कार्निवाल और विन्टेज—(जिन में शराब की अत्याधिक खपत होती है) के ठीक नौ नौ मास पश्चात् पड़ते हैं। स्विटजरलैंड के उन प्रांतों में जहां कि शराब तैयार की जाती है इस बात का प्रमाण और भी अधिक स्पष्ट रूप में मिलता है। वहां विन्टेज के मेले के नौ मास पश्चात् उत्पन्न होने वाले बालकों में से एक बड़ी संख्या पागलों की होती है परन्तु अन्य समयों में मुन्किल से कभी कोई पागल बालक जन्म ग्रहण करता है।

गर्भाधान के उद्देश्य से दम्पति के मिलन का समय सदा निर्दिष्ट करके सुनिश्चित नहीं और प्रायः निर्दिष्ट कर लेते हैं और

कर पूर्ण विचारों की है कि गर्भावधान के समय दम्पति की शारीरिक और मानसिक अवस्था तथा प्राकृतिक परिस्थिति का सन्तान पर गहरा प्रभाव पड़ता है। प्रमाण स्वरूप हम देख सकते हैं कि एक ही दम्पति की स्वस्थ और रुग्णावस्था में उत्पन्न सन्तानों में फिदना अन्तर रहता है, पहली की अपेक्षा दूसरी कितनी निष्कृष्ट होती है। फोरेल महोदय ने अपनी पुस्तक Sexual Question में इस विषय पर अच्छा प्रकाश डाला है। आप के विचार में सम्भवतः मैं गर्भावधान करने से सन्तान पर अवश्य बुरा प्रभाव पड़ता है। इस के अतिरिक्त आप ने स्विटजरलैंड की १९०० ई० की जन संख्या पर विचार कर के पागलों की उत्पत्ति के विषय में एक संक्षिप्त सिद्धान्त देकर निकाला है। आप का कहना है कि स्विटजरलैंड में वर्ष भर में ऐसे दो समय आते हैं जिस समय कि अधिकतर पागल बालक जन्म ग्रहण करते हैं और वे दोनों समय उस देश में होने वाले दो मेलों—कार्निवाल और विन्टेज—(जिन में शराब की अत्याधिक खपत होती है) के ठीक नौ नौ मास पश्चात् पड़ते हैं। स्विटजरलैंड के उन प्रान्तों में जहाँ कि शराब पैवार की जाती है इस बात का प्रमाण और भी अधिक स्पष्ट रूप में मिलता है। वहाँ विन्टेज के मेले के नौ मास पश्चात् जन्म होने वाले बालकों में से एक बड़ी संख्या पागलों की होती है परन्तु अन्य समयों में मुश्किल से कभी कोई पागल बालक जन्म ग्रहण करता है।

गर्भावधान के अवसर से दम्पति के भिन्न का समय सदा निश्चित करना अत्यन्त जरूरी और प्रायः निश्चित करने के लिये भी

एक प्राकः सभी आवश्यक विषयों पर वैज्ञानिक ढंग से सभी जिनक समझना हो चुकी है, स्वयं अनुभव की उत्पत्ति की विधि, वर्णन, और माता पिता का शारीरिक सम्बन्ध जादि सम्बन्ध ही में बदे हैं। वैज्ञानिकों और डाक्टरों का ज्ञान इस और विस्तृत ही नहीं जाता और समाज भी इस और से विस्तृत बेलपर है।

अभी हाल ही में फ्रांस की एक वैज्ञानिक समा ने १८५३ ई० से अब तक की जन्म तिथियों के अंक से कर यह सिद्धान्त निश्चित किया है कि अनुभवों के गर्भाधान पर ऋतु का पूर्ण प्रभाव पड़ता है। वर्ष भर में उत्पन्न बालकों की जन्म तिथियों को देखने से ज्ञान बड़ेगा कि सभी माताओं में एक समान बच्चे नहीं उत्पन्न होते। प्रविष्टी के उत्तरीय भाग के देशों में अधिकांश बच्चे फरवरी और मार्च में उत्पन्न होते हैं और इस समय में भी १५ फरवरी से १५ मार्च तक ही उन में से अधिकांश संख्या जन्म लेती है। इस से स्पष्ट सिद्ध है कि उन देशों में अधिकांश गर्भ ५ मई से ५ जून तक स्थिर होते हैं। महाराय रिचेट अपनी पुस्तक में डॉ० बर्टीलेन की पुस्तक से उद्धरण दे कर लिखते हैं कि यह खास ऋतु में गर्भ स्थिर होना कोई आकस्मिक घटना नहीं और न इस का यह कारण है कि पाश्चात्य देशों में युवतियां बसन्त ऋतु में विवाह करना अधिक पसन्द करती हैं। इस के अतिरिक्त हम देखते हैं कि सब से अधिक आरज बच्चे भी अन्य बालकों के समान उसी ऋतु में जन्म लेते हैं। यह सिद्धान्त गरीबों, ग्रामों और अमीरों गरीबों में एक समान पाया जाता है।

शुद्धि और मात्र आचार्य अस्वामी की अनेक बहुत प्रकट होते हैं, एक दो दिन जाने का बीजे जैसे नहीं रहते। इस सिद्धान्त का प्रतिपाद करने से कुछ लोग नहीं और न वह कार्य सरल भी है। इसे हम वैयक्तिक अनुभव कर ही जोकते हैं। अब शनैः शनैः योग्य घर घर विचारित होकर, अभिप्रेत रीति से जीवन चर्या को चला कर सम्बन्धोत्पत्ति करेंगे-तो सत्य स्वयं दिन के प्रकारों की आन्तिम रूप में प्रकट हो जायगा।



केवल ही अधिक सहज होना संसार में दुःख अनुभव करने
के लिये ही अधिक अवसर उस के लिए आयेगे।

एक आदर्श माता, जिस में अपने शारीरिक सुखों से विमुख
होकर कठोर वात्सल्यों और पीड़ाओं को सहते हुए नवीन सन्तति
की उत्पत्ति के लिए अपने स्वार्थ को पैरों तले कुचल दिया है,
किसी फरोकरी सफलता से कम सम्मान की पात्र नहीं।

सृष्टि के आरम्भ से सम्मान की उत्पत्ति, और उस के वाक्य
में अनुभव होने वाली संज्ञाओं को देखते हुए भी माताओं की
मात्र तक सम्मान के लिए वही प्रकार सोस्ताह इच्छुक देख कर
अनुभव बुद्धि अवश्य चकरा जाती है। न जाने, लीजम्ब आबाज
की वह कौन सी स्वर्गीय अन्वात्मिक प्रेरणा है जो इन स्वर्गीय
देवियों को कठोर संज्ञा सहने के लिए उत्पर कर देती है। सुसज्ज,
सुरक्षित, अनुभव समाज से ले कर हिंस्र पशुओं तथा शराक
मिलहरी आदि छोटे छोटे जीवों तक में भी अपने आलु के जीवन
काळ में अश्वतः शारीरिक सुख योग की झलसा से प्रकृति के इस
उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए परस्पर मिलने की इच्छा उत्पन्न
होती है। यह कहना अत्यन्त कठिन है कि इन वन्य पशुओं को
अर मादा के परस्पर मिलने के परिणाम स्वरूप सन्तानोत्पत्ति का
ज्ञान रहता है। परन्तु बच्चे के पैदा हो जाने के पश्चात् सिंहनी
का सिहरावक को मूक माता द्वारा शिक्षा देना और उस का अपने
बच्चे के प्रति अगाध स्नेह उस में मादमाय की विद्यमानता का
साक्ष्य प्रमाण है। अनुमानतः असज्ज और अधिकसिद्ध अवस्था
में अनुभव समाज में भी माता पिता द्वारा इस प्रकार का शिक्षण
सैकड़ों वर्षों तक जारी रहा होगा। और आज दिन भी हमारे

बन्धन का डार

माता के लिए सन्तान स्वर्गीय और अनुपम आनन्द का कोष होती है इस लिए इस सम्बन्ध में 'आत्मोत्सर्ग' का प्रयोग सम्भवतः पाठकों को आपत्ति जनक ज्ञेय सकता है। किन्तु वस्तुतः यह सत्य है और इसे प्रकट करना आवश्यक है। अब तक इस सत्य के प्रकट न हो सकने के कारण स्त्रियों पर कितनी ही कठोरतायें और अत्याचार होते रहे हैं।

बहुत बड़े ऐसे मनुष्य होंगे जो प्रसव की प्राणान्तक पीड़ा से परिचित न हों। इस पीड़ा का स्मरण करके अनेकों स्त्रियों के प्राण कांप उठते हैं और अनेक स्त्रियाँ एक बच्चा उत्पन्न हो जाने के के पश्चात् दूसरी सन्तान को गोद में लेने का साहस नहीं कर सकतीं। मनुष्य प्रायः ऐसी स्त्रियों का अपमान और तिरस्कार करते हैं। परन्तु यदि वे उस पीड़ा की कल्पना भी कर सकते तो अवश्य उन के हृदय में उन स्त्रियों के लिए सहानुभूति उत्पन्न होती और वे समझ सकते कि इस का उत्तरदायित्व उन स्त्रियों पर नहीं बल्कि प्रकृति पर है। यदि स्त्री के शरीर की रचना समान ढंग से भिन्न किसी और ढंग की होती तो शायद प्रसव तथा पीड़ा जनक न होता। जिस समय बच्चा माता के गर्भ से निकल कर एक स्वतन्त्र मनुष्य के समान विस्तृत पृथिवी और लवण वायु मंडल में जाने के लिए तैयार होता है तो उसे माता के शरीर की हड्डियों के ढाँचे के एक द्वार (चूले की हड्डियों) में से हो कर निकलना होता है। यह द्वार कमान के समान दो गोलाकार हड्डियों का बना होता है और इस की चौड़ाई लगभग तीन या चार इंच होती है। यदि पक्ष शरीर से विद्यमान होते

उस समय वेसुध रहता है। उस के मस्तिष्क में किसी भी प्रकार की स्थिति उस अवस्था में नहीं रह सकती। लेकिन उस के सिर पर इस दबाव का प्रभाव—जिस के कारण उस के सिर को ठीक से सीधा होने में कई सप्ताह लग जाते हैं—अवश्य बुरा पड़ता है, और असम्भव नहीं कि वह उसर सम्पूर्ण आयु के लिए उस पर ही जाता हो। शोक है कि वैज्ञानिकों ने कभी इस विषय पर विचार नहीं किया। यह प्रकट ही है कि सुसम्बन्ध मनुष्य की बुद्धि और शक्ति बढ़ती जाती है, और इस कारण उत्तरोत्तर नई आने वाली सन्तान के सिर भी बड़े होते जाते हैं, लेकिन माता के शरीर में बना हुआ वह इसी का द्वार तो बढ़ता नहीं, इसलिए यह कल्पना कर लेता कुछ कठिन नहीं कि किसी दिन माता के गर्भ से सन्तान का उत्पन्न होना अत्यन्त कठिन हो जायगा। यह प्राकृतिक नियम है कि मनुष्य जिस अंग से अधिक काम लेता है वह अंग अधिक पुष्ट और सरल होता जाता है। इस नियम के अनुसार यदि हम अपने मस्तिष्क पर बहुत अधिक निर्भर रहेंगे तो बहुत सम्भव है कि एक दिन मनुष्य का सिर माता के इस अस्थिद्वार (Pelvic bones) से बाहर न निकल सके और सन्तान उत्पत्ति का कार्य बन्द हो जाय, उस दिन सन्तानोत्पत्ति से घबराने वाली स्त्रियों पर नाराज होने वाले पुरुषों का क्रोध क्या कर सकेगा? क्या समाज इस आने वाली आपत्ति के लिए कोई उपाय सोच रहा है? हमारी सम्मति में ऐसी अवस्था में ओपरेशन ही एक मात्र उपाय शेष रह जायगा और ओपरेशन एक आवश्यक और साधारण क्रिया हो जायगी। ये माता आपत्तियाँ—जिन के उपायों की इस पुस्तक में चर्चा की गई है—समाज की वर्तमान अवस्था

कुछ
लक्षणों के

ये संकीर्ण पत्र की रचना ने
भी इस कड़ी प्रभाव करते हैं इस से

मान होगा कि स्वास्थ्य ठीक
रचना होने पर प्रत्येक लक्षण भी विलोपित नहीं होता।
जाय किन्ती है :—

...बिल्कुल ठीक स्थिति को बालक के अलग-अलग को रखा हुआ
वह केवल पन्द्रह मिनट में बिना किसी कष्ट के बाहर आया।
उस समय कोई दाईं अथवा डाक्टर मेरे पास न था। बालक
अत्यन्त सुन्दर और स्वस्थ है। उस का वजन प्रसव के समय सवा
चार सेर था। सारा दिन वह अपने छोटे छोटे हाथ पैर हिला-रे
कर और मोले मोहरे से मुस्करा कर मेरे मन को हर्षित
करता है।”

शोक का विषय है कि इस प्रकार की स्वस्थ स्त्रियों की
संख्या बहुत कम है। यदि वैज्ञानिक और डाक्टर इन पीड़ाओं के
कारणों पर विचार कर उन का उपाय सोचने का यत्न करें तो
सम्भव है कि विरोध खत्म हो। आशय तो यह है कि नित्य-प्रति
इन कष्टों को देखते हुए भी, मानवी शरीर की रचना के कारण
उपस्थित होने वाली इस आपत्ति का उपाय जब तक नहीं सोच
निकाला गया। अभी हाल में कुछ विचारकों ने इधर ध्यान दिया
है और उन्होंने ने इस अस्थिद्वार (Pelvic bones) के अधिक संकुचन
होने की आपत्ति का प्रधान कारण खोज निकाला है। उन का
कहना है कि इस का कारण गर्भपन में लवकियों का समुचित रूप
से ठीक लड़कन पाकन न होना और पौष्टिक आहार का अभाव है।



अनेक ऐसे कष्ट जी स्त्री को सहने पड़ते हैं जिन्हें कि वह केवल होने के कारण अपने प्रति के सम्मुख प्रकट नहीं होने देती और बिल पर कंधर रख उन्हें सह लेती है। इस पुस्तक के अगले पृष्ठों में हमें इसी विषय पर विचार करना है कि कौन से कष्ट और पीड़ाएँ आवश्यक हैं जिन का कि उपाय नहीं, और कौन २ ऐसे कष्ट हैं जिन का कारण केवल अज्ञान, अस्वास्थ्य और परिस्थिति का ठीक न होना है और वे कौन से उपाय हैं जिन के अवलम्बन से 'असंपूर्ण, स्वस्थ, सम्पन्न दम्पती' क्लेश और असुविधा से बच सकते हैं। इस सम्बन्ध में इस से पूर्व लिखी गई अनेक पुस्तकों में केवल रोगों और उन की चिकित्सा का वर्णन है परन्तु स्वस्थ व्यक्तियों के लिए मार्ग दिखाने वाली पुस्तक एक भी नहीं, बस इसी न्यूनता को पूरा करने के लिए यह पुस्तक लिखी गई है।

कुछ लोगों को-जो कि नवयुव और भावी माता को सलाह देने के लिए पुस्तकों की लम्बी सूची सम्मुख रखना चाहते हैं-साबद यह पुस्तक निरर्थक प्रतीत हो। परन्तु वे सब पुस्तकें अधिकांश में हमारी आँखों के सामने से गुजर चुकी हैं, और इस पुस्तक के लिखे जाने का कारण भी यही है कि उन पुस्तकों में युवा दम्पती के लिए गम्भीर और उपयोगी सलाह का बिलकुल अभाव है। स्वस्थ, सुखी और ग्रन्थभावस्था के सम्पन्न मनुष्य ही हमारे विचार में समाज का आधार हैं। उन्हीं के हृदय में समाज हित और भविष्य की चिन्ता दिलाई पड़ती है और हमारी यह पुस्तक उन्हीं के प्रयोग के लिए है। नवयुवती माता के साथ २ ही हमें यहाँ कुछ नवयुवक पिता के सम्बन्ध में भी कहना है जिस की तरफ की प्रायः सोचों की दृष्टि नहीं जाती।

सकती बहों तो उसे एक मार्ग दर्शक की आवश्यकता अवश्य ही है। शोक है कि प्रति दिन हमारे जीवन में ऐसी घटनाएँ उपस्थित होती रहती है जिन से हमें निश्वास करना पड़ता है कि प्रकृति का व्यवहार हमारे प्रति निर्ययतापूर्ण है। जिस समय प्रेम रस में पगे दम्पती नवीन सुन्दर सन्तान की उत्पत्ति द्वारा अपनी सामर्थ्य के अनुसार समाज की सब से बड़ी सेवा करने के लिए प्रस्तुत होते हैं ठीक उसी समय भाग्य की क्रूर विडम्बना से उन्हें शारीरिक पीड़ा सहने के लिए बाधित होना पड़ता है। एक लेखक के ये शब्द कितने सुन्दर हैं कि 'स्वर्ग की परल अग्नि से और हृदय की परल पीड़ा से होती है।' यदि दम्पती भली प्रकार यह जानते हुए कि किन कष्टों से वे बच सकते हैं और किन का भोगना अनिवार्य है, इस पवित्र कार्य को हाथ में लें तो इस शुभ कार्य की महत्ता, पवित्रता और स्वर्गीयता के विषय में कोई सन्देह न रह जाय और ईश्वरीय नियम के अनुसार इस भौति उत्पन्न हुई सन्तान अवश्य आदर्श हो।



कमरी के कमरे, जीवन में कई ऐसे काम कर बैठती हैं। जिस का परिणाम अत्यन्त अमानक हो जाता है। इस समय स्त्रियों की मानसिक अवस्था तो वही पुरानी है अर्थात् वे उन सब बातों को अनावश्यक समझ कर उन से अनभिज्ञ रहती हैं परन्तु शारीरिक अवस्था उन की नवीन परिस्थिति के अनुसार निर्बल हो गई है और वे इस निर्बल अवस्था में उन साधारण प्रभावों के झटके के अयोग्य हो गई हैं।

पुराने समय से अस्तित्व में बैठी हुई भावनाएँ, प्रवृत्तियाँ और वर्तमान परिस्थिति मिल कर कभी २ नववधू को अपने पति के प्रति उस के व्यवहार के विषय में गहरी उलझन में डाल देती हैं। अपने प्राणपति के प्रेम के परिणाम स्वरूप सन्तान को देखने की इच्छा उस के हृदय में अत्यन्त प्रबल होती है। माया कन्ता के पिता और उस की स्वर्गीय इच्छा पूरा करने वाले प्राणपति के प्रति उस का हृदय भ्रष्टा, अनुराग और कृतज्ञता से पूर्ण हो उठता है। परन्तु ठीक उसी समय उस के हृदय में अपने पति से दूर रहने की स्वभाविक इच्छा उसे उलझन में डाल देती है। पर इस इच्छा को वह किसी भी भाँति प्रकट नहीं होने देती। अपने हृदय के अन्तरतम भावों में और इस इच्छा में विरोध देख कर वह अत्यन्त विस्मित होती है। वह भली प्रकार समझती है कि अपने पति के सम्मुख इस प्रकार के भावों को प्रकट करना बड़ा क्रूरता होगी और विशेषतया उस समय जब कि पति उस के विषय में अत्यन्त चिंतित हो कर अपनी सामर्थ्य के अनुसार उस के लिए सब प्रकार की सुविधाएँ एकत्र करने का प्रयत्न कर रहा हो।

न जानक अनुरक्त हो गया। वह स्वरूप कर के कि वे मेरी अस्ती
सम्मान के लिये हैं मेरा मन मुक्तिपथ हो चला था।"

साधारणतः बोधे का बहुत समय के लिए निज निज कार्य
ही की इस आन्तरिक व्यापार और उत्थान में से गुजरना
पड़ता है जिसे कि वह अपने पति के प्रति अपनी वास्तविक भक्ति
और अनुराग के कारण प्रकट करने में असमर्थ रहती है। इस
अन्तर आन्तरिक भावों को अवरण नीतर द्वा देने से शरीर और
मन पर आतंक प्रभाव पड़ना अनिवार्य है। इस लिए वह जान लेना
आवश्यक है कि ऐसे समय पर पति के प्रति हृदय में इस प्रकार के
भाव कुछ समय के लिए ही आते हैं। उस समय यदि वह अवस्था
वहाँ तक भी पहुँच जाय कि बी को पति के दरान, समीप बैठना
और एक घर में रहना तक भी मिला न जंवे तो भी चिन्तित होने
की आवश्यकता नहीं। इसे केवल मनुष्य स्वभाव और प्रकृति का
अंग ही समझना चाहिये।

वह बात पूर्ण निश्चय से नहीं कही जा सकती कि सब
अवस्थाओं में सभी कियों पर इस प्रकार का समय अनिवार्य रूप
से आता है परन्तु हाँ, मायुक, कोमल हृदय, और स्नेहमयी श्रियों
के लिए तो वह समय अवश्य ही आता है। जहाँ पति पत्नी सम्मान
न चाहते हों वा जहाँ पत्नी को मातृत्व पद स्वीकार न हो वहाँ की
तो बात ही और है। परन्तु सम्मान की इच्छुक, स्वस्थ, प्रेमयुक्त,
सुरिक्षित और सब सुविधाओं से युक्त कियों में से भी अधिकतर
इस उत्थान से नहीं बच सकती। केवल वही रद्द निश्चय और
विश्वास कि अपने पति के प्रति उस का अगाध प्रेम और भक्ति है,
बी को इन विचारों को विचारने रखने की सामर्थ्य देते हैं लेकिन

होने की कोई आवश्यकता नहीं होगी। जब केवल उन्नी अवस्था में है जब कि इस प्रकार का समय आने पर स्थान तथा परिस्थिति की संगी के कारण की पुनः के अनधिक सामीप्य का समय करना कठिन हो। इस मानसिक बोझ के कारण की का स्वभाव विकृत हो जाता है और एक बार जब की पुनः में, कुछ समय के लिए, प्रेमयुक्त शब्दों के स्थान में कठोर शब्द प्रयुक्त हो जाते हैं तो वे स्वभाव में अड़ पकड़ लेते हैं और सदा के लिए अननुदाय का कारण बन कर जीवन की नीरस और क्लेशमय बना देते हैं।

हम पहले भी कह चुके हैं कि वह मानसिक विरोध की अवस्था सभी अवस्थाओं में अनिवार्य नहीं। कभी कभी इस से ठीक उल्टे की के हृदय में पति के प्रति अगाध प्रेम का सागर कमड़ बरका है और वह अपने पति के प्रति और भी अधिक अनुरक्त हो जाती है। यह विषय अत्यन्त महत्व पूर्ण है अतः इस पर हम इस पुस्तक में आगे बढ़ कर बारहवें अध्याय में समुचित रूप से विचार करेंगे।

यदि कभी सम्मान की अवस्था में सुख हुआ और वैयक्तिक स्वार्थ की अपेक्षा हमारा ध्यान आत्मीय हित की ओर गया, तो सम्भवतः कोई ऐसा उपाय निकल सके जिस से अधिक से अधिक धन प्राप्त इस प्रकार की सुविधा प्राप्त कर सकेंगी। (आमः कल वह रिवाज) है कि प्रत्येक के दिन समीप आ जाने पर अन्तः प्रायः बाहर नहीं निकलती। शहरों के भीड़ भड़के और धक्के मुक्की की हाजत में बाहर न निकलना ही बेहतर है। परन्तु यदि भीड़-भाड़ से अलग किसी एकान्त स्थान में भ्रमण का अवकाश गाड़ी पर सैर का प्रबन्ध हो सके तो बहुत ही उत्तम होगा। इस प्रकार स्वच्छ तथा ताजी हवा में फिरने, रमणीय दृश्यों के देखने और मन प्रसन्न रहने का प्रभाव आगामी संन्तान पर बहुत अच्छा पड़ता है। यदि इस प्रकार सुविधायें प्राप्त न हो सकें तो भी यदि माता सुरक्षित हो, तो वह मनोरञ्जक पुस्तकों से अथवा इस प्रकार के 'वार्तालाप' से अपने लिए कल्पना और विचारों की जादूरी परिस्थिति उत्पन्न कर अपनी गर्भस्थित संन्तान पर अपूर्व प्रभाव डाल सकती है। इस के अतिरिक्त और भी कई अच्छे ढंग हैं जिन से अभी माँति मन बहलाव हो सकता है और समय का सदुपयोग भी हो जाता है। यदि उसे अभ्यास हो तो वह जाने वाले स्वर्गीय दूत के लिए छोटे-२ सुन्दर वस्त्र सीने और उन पर अपने विचारों और भावनाओं के अनुसार मनोरञ्जक बेल बूटे निकालने में अपने समय को व्यतीत कर सकती है। इसी प्रकार कई अन्य छोटी-छोटी वस्तुओं में—जो प्रायः बड़ी और मूल्यवान् वस्तुओं की अपेक्षा भी अपने साथ सम्बद्ध स्मृति के कारण कहीं अधिक प्रिय और मूल्यवान् प्रतीत होती है—समय

आधी आधी की कुछ कल्पना

कभी सम्राट की जगन्मा में सुवार हुआ और वैवस्वित स्वर्ग
 अपने हाथों में ज्ञान आलीख दित की ओर गया, तो सम्भवतः
 ऐसा उपाय निकल सके जिस में अधिक से अधिक किन्हीं
 प्रकार की सुविधा प्राप्त कर सकेंगी। आज कल यह रिवाज
 के प्रसन्न के दिन समीप आ जाने पर मात्रा प्रायः बाहर
 निकलती। शहरों के भीड़ भड़के और पक्के मुन्नी की हाकत
 बाहर में निकलना ही बेहतर है। परन्तु यदि भीड़ भाव से
 जा किसी एकान्त स्थान में भ्रमण का अवकाश पावी पर
 र का प्रबन्ध हो सके तो बहुत ही उत्तम होगा। इस प्रकार
 जब सदा सजीव हवा में फिरने, रमणीय दृश्यों के देखने और
 प्रसन्न रहने का प्रभाव आगामी सन्तान पर बहुत अच्छा
 पड़ा है। यदि इस प्रकार सुविधायें प्राप्त न हो सकें तो भी यदि
 सा सुरक्षित हो, तो वह मनोरञ्जक पुस्तकों से जबका इस
 काल के 'वार्तालाप' से अपने लिए कल्पना और विचारों की
 त्वरि परिस्थिति कल्पना कर अपनी गर्भस्थित सन्तान पर
 तत्पर प्रभाव डाल सकती है। इस के अतिरिक्त और भी कई
 ऐसे ढंग हैं जिन से अभी मांति मन बहलाव हो सकता है और
 जिस का सहुपयोग भी हो जाता है। यदि उसे अभ्यास हो तो
 वह जाने वाले स्वर्गीय दूत के लिए छोटे-से सुन्दर वस्त्र सीने और
 न पर अपने विचारों और भावनाओं के अनुसार मनोरञ्जक के
 दे निकालने में अपने समय को व्यतीत कर सकती है। इसी
 प्रकार कई अन्य छोटी-छोटी वस्तुओं में—जो प्रायः बड़ी और
 स्वर्ण वस्तुओं की अपेक्षा भी अपने साथ सम्बद्ध स्थिति के
 प्रत्यक्ष ही अधिक शिव और मूल्यवान् प्रतीत होती है—सम्भव

यदि जमी जल की कल्पना में सुचारु रूप और वैयक्तिक रूप की अपेक्षा हमारा ध्यान आजीव दिव की ओर गया, तो सम्भव कोई ऐसा कल्पन निकल सके जिस से अधिक से अधिक जिन इस प्रकार की सुविधा प्राप्त कर सकेंगी। ज्ञान का यह कह रिया है कि प्रलय के दिन सभी जा आने पर जाता प्रायः वाह नहीं निकलती। शहरों के जोड़ बहाके और बड़े सुभी की हाथ में बहाव न निकलना ही बेहतर है। परन्तु यदि जोड़-बाँध का काल किसी एकान्त स्थान में प्रलय का अवकाश ग्राही और का प्रलय हो सके तो बहुत ही उत्तम होगा। इस प्रकार सम्भव तथा वाची हवा में फिरने, रमणीय दृश्यों के देखने और मन प्रसन्न रहने का प्रभाव आगामी संस्तान पर बहुत अच्छा पड़ता है। यदि इस प्रकार सुविधाएँ प्राप्त न हो सकें तो भी जा जाता सुरक्षित हो, तो वह मनोरञ्जक पुस्तकों से अच्छा। इस प्रकार के वातावरण से अपने किए कल्पन और विचारों का आधारी परिस्थिति उत्पन्न कर अपनी गर्भस्थित संस्तान पर अपूर्व प्रभाव डाल सकती है। इस के अतिरिक्त और भी बहुत कुछ हैं जिन से अभी आँखें मन बहकाव हो सकता है और समय का सदुपयोग भी हो जाता है। यदि उसे अभ्यास हो वह जाने वाले स्वर्गीय दृष्ट के लिए छोटे-से सुन्दर वस्तु सीने और मन पर अपने विचारों और भावनाओं के अनुसार मनोरञ्जक बड़े-छोटे निकालने में अपने समय को व्यतीत कर सकती है। इस प्रकार कई अन्य छोटी-छोटी वस्तुओं में—जो प्रायः बड़ी और मुख्यमान वस्तुओं की अपेक्षा भी अपने साथ सम्बद्ध स्मृति और मुख्यमान प्रतीत होनी है—समय

अपनी माता को अत्यन्त आवश्यक होगा। इस मानसिक कल्पना से माता गर्भ स्थित संतान की शारीरिक अवस्था में बहुत अधिक जानकारी कर सकती है, इस लिए यह केन्द्र सम्बन्ध का सदुपयोग ही यहाँ परम्पु आवश्यक भी है। संतान के शरीर निर्माण की गुप्त और महत्व पूर्ण कृति का आधार तथा केन्द्र माता का शरीर है, अतः यदि कल्पना द्वारा उसे अच्छी परिस्थिति में रखा जायगा तो उस का प्रभाव बाह्य पर भी अवश्य पड़ेगा और माता की कुछ कल्पना के पूर्ण करने का मुख्य साधन भी होगा।

माँ की माँ के संकट ।

जो लोग केवल शारीरिक सौन्दर्य के लक्ष्य हैं उन्हें गर्भावस्था के बिना अवश्य विरोध हुआ करता है। क्योंकि जन्म के प्रकट होने पर वह अवस्था करना कठिन हो जाता है कि है। अभी फिर शरीर में हट भी जायेंगे। भ्रूणिक नियम के अनुसार जब समय के लिए स्त्री का सौन्दर्य गर्भावस्था के दिनों में अवश्य ही बढ़ता है। यहां तक कि अनेक स्त्रियों को अपनी यह अवस्था अत्यन्त प्रशंसित जान पड़ती है और बहुत सी स्त्रियां ने इससे प्रसन्न हो जाती हैं। इस आजुक हालात में इन भावों को दबाना अत्यन्त कष्ट प्रद होता है। इसलिए यह आवश्यक है कि इस समय को, स्त्री सुन्दर सन्तान प्राप्ति के सुख की कल्पना तथा अपने शारीरिक सौन्दर्य को पुनः प्राप्त करने की आशा में व्यतीत करने का प्रयत्न करे। इस से उसे अपनी मानसिक अवस्था से बहुत सीमा तक छुटकारा मिलेगा।

हमारे सभ्य समाज का सब से अधिक निन्दनीय तथा क्रूर काम नव बच्चे को सन्तानोत्पत्ति के परिणामों से अनभिज्ञ रखना है। कुछ लोग तो झूठी लज्जा के बराबर होकर और कुछ अपनी विश्वासक्ति तथा अपवित्र इच्छाओं को पूर्ण करने के विचार से सन्तानोत्पत्ति के संकटमय चित्र को, माँ की माँ से छिपाये रखते हैं। इस का परिणाम यह होता है कि बहुत सी नवयुवती स्त्रियां, बिना समझे और जाने ही कि उनके मार्ग में कौन कौन से कष्ट उपस्थित होंगे, माता बनने के लिए बड़ी उत्सुकता और उत्कण्ठा से आगे बढ़ पड़ती हैं। उन्हें इस बात का ज्ञान नहीं होता कि इस कार्य से उन्हें, अपने, फिर कभी प्राप्त न होने वाले, सौन्दर्य का बहिष्कार कर देना होगा। हम यह स्वीकार करते हैं कि इस प्रकार का

में विकसित है वह सम्मानोत्पत्ति के मार्ग में आने वाले कहीं कभी अवधीत न होगी । हम पहले आरम्भ में ही यह चुके हैं । कभी प्रेम पूर्ण रूप, सम्मान के इच्छुक होते हैं । परन्तु क्या सम्भव है कि एक स्त्री जिस के पति के प्रेम का आधार केवल उस का शारीरिक सौन्दर्य है, कभी सम्मानोत्पत्ति द्वारा अपने सौन्दर्य को संकट में डालने का साहस करेगी ।

ये कुछ जनों के कितने अमानुषिक, निर्दयतापूर्ण और परस्पर विरोधी विचार हैं कि जिस कारण से वे अपनी पत्नी अनादर करते हैं, नवयुवती व्यक्तियों के वसी कार्य से परेशान करने पर, उन की निन्दा करते हैं ।

जो कुछ ऊपर क्लेश गया है उस से हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि स्त्रियाँ अपने इस कर्तव्य से विमुक्त हो जाँय अब पति, अपनी स्त्री के शारीरिक सौन्दर्य के नारा की आशंका अपने प्रेम के प्रमाण स्वरूप नवसन्तति को उत्पन्न करना छोड़ वे हमारा अभिप्राय है कि न तो स्त्री को मिथ्या भ्रम में रखना उचित है और न उसे काल्पनिक कष्टों के भयान्तर भिन्न खींच । अवधीत करना ही उचित है । यदि ये भ्रूक्षतापूर्ण व्यवहार अनेक स्त्रियों के प्रबल अभ्युपग्राह का कारण न हो चुके होते तो सम्भव हम उन्हें परिहास ही में टाक देते ।

प्रसव के कुछ काल पश्चात् स्त्री में बढ़ने फिरने तथा घर, काम काज करने की शक्ति आने लगती है । वह कुछ समय में पति के साथ बैठ फिर कर उस के भ्रमण और आनन्द, प्रसोप योग देने के योग्य हो जाती है । यदि उस में इस प्रकार के काम के करने के लिये पहले से कुछ कम शक्ति रह जाय तो

कहती थी कि आज मुझे कुछ कहना पड़करीक है। मेरे बच्चे का हृत्पत्र ७३ सेर के लगभग था।

ऐसी स्त्रियों की संख्या बहुत कम अवश्य हो गई है परन्तु समाज अभी तक इन से सर्वथा शुन्य नहीं हुआ। इन स्त्रियों के चेष्टाहरण अनेक नवयुवतियों के लिए उत्साह तथा आशा का कारण बनते हैं और वे बड़े धैर्य से प्रसन्नता पूर्वक उस संकट-मय समय की प्रतीक्षा आरम्भ करती हैं। परन्तु ज्यों ज्यों महीने बीतते जाते हैं और प्रसव काल निकट आने लगता है इन चेष्टारी लड़कियों का धैर्य और उत्साह बढ़ जाता है और वे अचानक हतोत्साह स्त्रियों की श्रेणी में आ मिलती हैं।

इस कह और पोक़ा की आशंका के साथ स्त्री के मन को व्याकुल करने वाले और भी अनेक कारण आ सम्मिलित होते हैं। अपनी शक्ति के हास से और अपने सौन्दर्य के लोप से उसे मय होने लगता है कि कहीं उस के पति का प्रेमबन्धन उस की ओर से ढीला तो नहीं हो रहा है। वह अपने पति की पर्याप्त सेवा नहीं कर सकती, उसे प्रसन्न करने का कोई उपाय भी नहीं कर सकती, इस अवस्था में उस का अश्वसीत होना स्वाभाविक है। फिर भी बहुत बार वह पति के हित के लिए कह उठती हुई, अपने कष्ट को छिपा कर, उसे प्रसन्न करने की चेष्टा करती है। परन्तु असफल होने पर उस का उत्साह जाता रहता है। शरीर और मन की इस नाजुक हाव में चुपचाप एक के ऊपर एक संकट सहने से उस के हृदय पर जो कुछ बीसती हो गी और उस का जो कुछ प्रभाव उस के शरीर तथा मन पर पड़ता होगा उस का केवल अनुमान ही किया जा सकता है। इस अवस्था का प्रभाव किसी सीमा तक

महिली विप्लव की अवस्था ।

श्री के निम्नलिखित, अकारण शोक और निराशा को देखना है । उसे शोक होना स्वाभाविक है । परन्तु उसे चाहिए कि इन अवस्थाओं से बड़ी का स्वभाव-म समझ कर केवल विरोध कार्यों से हुए स्वाधीन, परिवर्तन लाने और बचाव कि इस प्रकार का अवसर । जाने दे जिस से वह क्षणिक विरोध सारी मायु का सङ्कट का लय जैसा कि प्रायः भूखता के कारण हो जाता है । १९१८ ई. में यूरोप के प्रसिद्ध मातृ चिकित्सालय (Maternity home) की एक भाषा का अनुभव है कि प्रसव के समय स्त्रियों का व्यवहार प्रति के प्रति बहुत बुरा हो जाता है और अधिकांश स्त्रियाँ जो उन्हें सिर के बल नचा देती हैं । वह कहती हैं मैंने अपने जीवन में केवल एक ऐसा जोड़ा देखा है जो कि अन्तिम समय तक एक दूसरे के प्रति शांत तथा नम्र रहा था ।

साधारणतः लोगों का यह विश्वास है कि स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष कम सहनशील होते हैं । कठोर शब्दों और अपेक्षा पूर्ण व्यवहार का असर उन के हृदय पर स्त्रियों की अपेक्षा बहुत गहरा जाता है । परन्तु इस के साथ ही वह भी मानना पड़ेगा कि पुरुष में परिस्थिति के अनुकूल स्वभाव को बना लेने की भी क्षमता रहती है । जो भी असावधानी की अवस्था में इन साधारण और निर्दोष बातों का प्रभाव बहुत गहरा पड़ कर जीवन को कलह और क्रूरतामय बना देता है ।

जिस मनुष्य को शरीर रचना शास्त्र का बोधा बहुत भी ज्ञान है वह यदि माता के गर्भ में शरीर पिण्ड की रचना की पर कुछ भी विचार करे, तो उसे अवश्य अत्यन्त आश्चर्य । एक एक परमाणु जिस से शरीर की रचना होती है । किन्तु

७, माँ की पिता की उत्पत्ति

सन्तान की उत्पत्ति तथा उस के पालन पोषण में पिता का भाग भा-
 हा के समान ही महत्व पूर्ण है परन्तु अभी तक जनता तथा उक्त
 वर्गों पर लिखने वाले विद्वानों ने उस की बिल्कुल उपेक्षा ही की है।
 कई लेखकों ने उपहास के तौर पर अफ्रीका की असभ्य जा-
 तों का फ्लेज किया है जिन में सन्तानोत्पत्ति के पश्चात् माता
 स्वाम पर पिता बाळक को ले कर बिस्तर पर बैठता है। परन्तु
 स्वात्मक जीवन से सम्बन्ध रखने वाली उन कठिनाइयों और
 क्लेशों को बिल्कुल दृष्टि से ओझल रक्खा गया है जिन में से पिता
 अपनी प्रथम सन्तान के दर्शन से पूर्व गुजरना पड़ता है। बहुत
 दिने ऐसे व्यक्ति हैं जो इन असुविधाओं को समझते हैं और नवयुवक
 पिता को कष्ट में सहानुभूति और सात्त्वना देने की चेष्टा करते हैं।
 इस सम्बन्ध और शिक्षित समाज में ऐसे व्यक्तियों की
 संख्या प्रतिदिन बढ़ रही है जो स्त्रियों के कष्टों को अनुभव कर
 पालन के निवारण के लिए चिन्तित रहते हैं। वर्तमान सुरिक्षित
 समाज के अधिकांश भागों में स्त्री अब अपने अधिकारों को प्राप्त
 करने में सफल हो रही है और मातृक पुरुष उस की सुविधा और
 आराम का पर्याप्त ध्यान रखने लगे है। सुरिक्षित समाज में माता
 के लिए अनिष्टता तथा मजबूरी से सन्तान उत्पन्न करने का समय
 अब समाप्त हो चुका है और नवयुवक अधिकांश में अपने कर्तव्य

ममी के विद्विषेयन, अकारण क्रोध और विरक्ति को देखता है तो उसे खेद होना स्वाभाविक है। परन्तु उसे चाहिए कि इन उच्छ्वसों को ममी का स्वभाव न समझ कर केवल विरोध कारणों से हुए अस्वाभी परिवर्तन समझे और बधायकि इस प्रकार का अवसर न आने दे जिस से वह क्षणिक विरोध सारी आयु का सङ्कट बन जाय जैसा कि प्रायः मूर्खता के कारण हो जाता है।

यूरोप के प्रसिद्ध मातृ भिक्षुस्तालय (Maternity home) की एक धाया का अनुभव है कि प्रसव के समय स्त्रियों का व्यवहार पति के प्रति बहुत बुरा हो जाता है और अधिकांश स्त्रियाँ तो उन्हें सिर के बल नचा देती हैं। वह कहती हैं मैंने अपने जीवन में केवल एक ऐसा जोड़ा देखा है जो कि अन्तिम समय तक एक दूसरे के प्रति शांत तथा नम्र रहा था।

साधारणतः लोगों का यह विश्वास है कि स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष कम सहन शील होते हैं। कठोर शब्दों और अपेक्षा पूर्ण व्यवहार का असर उन के हृदय पर स्त्रियों की अपेक्षा बहुत गहरा पड़ जाता है। परन्तु इस के साथ ही यह भी मानना पड़ेगा कि पुरुष में परिस्थिति के अनुकूल स्वभाव को बना लेने की भी क्षमता रहती है। तो भी असावधानी की अवस्था में इन साधारण और निरर्थक बातों का प्रभाव बहुत गहरा पड़ कर जीवन को कुछ पूर्ण और असह्य बना देता है।

जिस मनुष्य को शरीर रचना शास्त्र का बोझ बहुत भीड़ है वह यदि माता के गर्भ में शरीर विन्द की रचना की विद्या पर कुछ भी विचार करे तो उसे अवश्य अत्यन्त आश्चर्य होगा। एक एक परमाणु जिस से शरीर की रचना होती है, किस

कति कमी आगु के लिए कम के सम्बन्ध को हट करने का कार्य
करावनी ।

कुछ दिन तक इस प्रकार सौम्य और ग्रेम का उपयोग करने
के बगल प्रकृति के चतुः नियम के अनुसार परस्पर की विरक्ति के
के दिन आ जाते हैं जब कि वृत्ति को अनिच्छा पूर्वक अपनी पत्नी
से एक दीर्घ काल के लिए विछुड़ जाना पड़ता है । इस आर स्वयं,
औरत, कुछ समय को व्यतीत करने का सब से अच्छा उपाय
अपने वैयक्तिक सुख और स्वार्थ को मुक्त कर वास्तविक ग्रेम सम्बन्ध
के अभिविधि, जाने वाले अवधि की अनोखक कल्पना में दिन
विजाना है ।

भावी पिता की सुसंरचनाएं

प्रायः सुना जाता है कि मनुष्य की प्रकृति में सन्तान की
 इच्छा, स्त्री की अपेक्षा कम होती है, और कुछ लोग तो यहाँ
 तक कहने का साहस करते हैं कि पुरुषों में सन्तान की इच्छा
 और प्रेम का बिल्कुल अभाव रहता है। परन्तु अनुभव इस कथन
 में पुष्टि नहीं करता। अधिकांश पुरुषों के हृदय में सन्तान के लिए
 एक इच्छा और गहरा वात्सल्य भाव रहता है। यं तो सन्तान
 राज और पिता दोनों के ही आत्मा का कारण होती है, परन्तु
 इस प्रसन्नता का अधिकांश पिता के ही हिस्से में पड़ता है।
 और माता के स्तर पर तो अधिकतर बच्चों का ही बोझ रहता
 है। प्रायः सन्तान भी पिता के प्रति ही अधिक अनुरक्त रहती है।
 प्रमाण के लिए लेखिका ने अपनी पुस्तक में एक रोचक और
 हास्यपूर्ण घटना का उल्लेख किया है। वे लिखती हैं—एक समय मैं
 अपनी एक सखी की वाकिफा से बातचीत कर रही थी। इन्होंने
 जादूरी पत्नी और जादूरी माता कहना सर्वथा बौद्ध होगा। वह
 महिला अपनी सन्तान से अत्यन्त स्नेह करती थीं और सदा उस
 की वज्रति और हित के लिए सचेत रहती थीं। मैंने वाकिफा से
 उस के पिता के सम्बन्ध में एक प्रश्न पूछा—वाकिफा ने प्रश्नवांश
 उलझा कि मैंने उससे पूछा है कि तुम माता और पिता में से किससे
 अधिक प्यारती हो? वाकिफा का उत्तर बुद्धिपूर्ण था। उस ने

इस बीजा को नहीं रक्त कर एक छत्र के लिए भी विज्ञान करने व सम्भावना नहीं। इस प्राकृतिक वन्यता के द्वार से गुजरे बिना उस के लिए कोई अन्य शक्ति का उपाय नहीं।

पुरुष की विवाह के लिए प्रेरित करने वाला अन्तरात्म भा किसी कोमलांगी के प्रति बीरोचित अनुराग और उसे अपनी रक्षा का आग्रह देने की प्रवृत्ति इच्छा होती है। युवक पति जब बोलता है कि जिस व्यक्ति को कह से बचाने के लिए उस ने अपना रक्त का हाथ फलाया था उसे उस ने स्वयं, अपने कृत्य द्वारा ही मनुष्य शरीर के लिए सम्भव, सब से भयानक कष्ट में फंसा दिया है, और वह भी अकेले, तो उस के मन पर जो कुछ गुंजरता है व केवल अनुभव से ही जाना जा सकता है। सन्तान दर्शन व आशा तथा प्रसन्नता का बहुत सा अंश इस दुःख से मिल के फिरफिरा हो जाता है। यह कहना कि उस छत्र अवसर के प्रतीक्षा में ये सब कष्ट-कठोरता एणवत् प्रतीत होते हैं और नवयुवक का अपनी मानसिक व्यवस्था को छिपाकर बेपरवाही जताने की चेष्ट करना पालण्ड और भूलता दिखाने का यत्न करना है। इस शूद्र बीरता के नवयुवक चाहे उस समय अपने भावों को छिपाने व सम्बर्ण हो जाय परन्तु अन्त में यह दिखावा उन की सहृदयता तथा शारीरिक स्वास्थ्य के लिए, सर्वथा हानिकारक होगा। वर्तमान अनोपिज्ञान शास्त्रियों का यह विश्वास है कि बचपन से जो मनुष्य अपने भावों को दबाने तथा गुप्त रखने की चेष्टा करने लगता है उस का प्रभाव उस की मानसिक अवस्था तथा हृदय पर बहुत बुरा पड़ता है। इस से जीवन में कृत्रिमता का कर मन की शक्ति को दबाने के लिए प्रयत्न होता है।

सन्तान-प्राप्ति का त्वयुक्त मूल्य भी समझी जानी चाहिए । :-

यदि कभी कोई ऐसा समय आ सकता है जब समाज में उत्पन्न होने वाले प्रत्येक बच्चे को इतना मूल्यवान समझा जाये कि कोई भी बच्चा बेपरवाही के कारण अथवा विचारा ही कर भूला नंगा न रह सके तो इस समय पिता द्वारा भोगे गये वे कष्ट उस के मूल्य का अनुभव कराने में विरोध सहायक होंगे । इस लिए उचित यही जान पड़ता है कि नवयुवक पिता की इस भावुकता को भेज दे कर और भी उत्साहित किया जाय और उसे प्रकट होने का पूर्ण अवसर दिया जाय । इस से जहां उसे कुछ स्वास्थ्यना मिलेगी वहां साथ ही हृदय को अवकाश मिलने से कष्ट और चिन्ता के बोझ में भी कुछ न्यूनता होगी और वह अपनी पत्नी के कष्ट में स्वतन्त्र रूप से सहायक हो सकेगा । इस अवस्था में यदि पत्नी पुस्तक में कही गई सलाहों को मान कर स्वास्थ्य, शारीरिक तथा आर्थिक अवस्था और श्रुतु, आदि का पूरा ध्यान रख कर मातृत्व ग्रहण करे, तो प्रसव का समय, उस के लिए, प्राकृतिक नियम के अनुसार आवश्यक कष्ट के अतिरिक्त अधिक क्लेशपूर्ण नहीं रहेगा । अनेक मानसिक उलझनों और चिन्ताओं के हट जाने से वह जीवन का विरोध कियात्मक तथा आनन्द हावक समय बन सकता है ।

हमारे बनावटी जीवन के परिणाम स्वरूप अनावश्यक शारीरिक निर्बलता, कुम्बन्ध और मानसिक बोझ के दूर हो जाने पर स्वस्थ युवती के लिए प्रसव का काल अधिक कष्टमय नहीं हो सकता । यद्यपि पुरुष के हृदय में सहानुभूति जन्म अथवा होनी ही चाहिए तो भी स्त्री के लिए आवश्यक शारीरिक पीड़ा द्वारा

१०, माँ की माता के शारीरिक कष्ट

माँ: सभी स्त्रियों के लिए गर्भावस्था का समय क्लेश और कष्ट का कारण होता है। केवल अमुविधार्प ही नहीं प्रत्युत अनेक शारीरिक रोग भी उस समय उन को हो जाते हैं। परन्तु प्राकृतिक अवस्था में वे बिल्कुल नहीं होने चाहिए। वास्तव में यह समय माँ की माता के लिए उत्साह, स्वास्थ्य और शारीरिक तथा मानसिक स्फूर्ति का होना चाहिए। परन्तु समाज में स्त्रियों के स्वास्थ्य का आदर्श दिन प्रति दिन गिरता ही जा रहा है।

इस सब का उपाय क्या है? गर्मिणी युवती को परामर्श और सहायता देने वाला कौन है? जन्म से ही तो यह सब आवश्यक ज्ञान स्त्री को होता ही नहीं। निस्सन्देह पृष्ठ तथा अनु-अभी स्त्रियाँ इस विषय में उस की कुछ सहायता कर सकती हैं। अपने अनुभव के आधार पर वे उसे कुछ थोड़ी बहुत सान्त्वना भी दे सकती हैं परन्तु शोक का विषय है कि वे, सब स्वयं भी इस मार्ग पर अत्यन्त कष्ट और क्लेश सहित यात्रा कर चुकी होती हैं, इस लिए उन के अनुभव कुछ उत्साह धर्षक नहीं होते, और साथ ही ज्ञान भी अपूर्ण होता है।

इस बात का हम पहले भी उल्लेख कर चुके हैं कि एक आशु लेखक—जिस का उद्देश्य साधारणतः स्त्रियों के स्वास्थ्य की उन्नति करना है—को छोड़ कर, इस विषय पर चिकित्सकों द्वारा लिखी

निर्दिष्ट मार्ग पर चलने के लिए जतनी ही अधिक
करानी पड़ती, परन्तु अत्यधिक अज्ञान के कारण होने वाली
असहज प्रतिक्रिया को दूर करने के लिए यह कमी तैयार
ही होती है।

इस विषय का ज्ञान प्राप्त करने के लिए लेखिका ने अनेक
तारों तथा स्त्री चिकित्सकों से बातचीत की है, परन्तु उन में से
कोई भी उन्हें संतोष प्रद उत्तर न दे सकी। इस पुस्तक में वर्णन
किये गये विषयों का दूसरों भाग भी वे नहीं जानतीं। केवल दो या
तीन दाइयों ही उन्हें कुछ साधारण बातें बता सकीं जो केवल
अवलोकन द्वारा सात्विक देने के सम्बन्ध में थी और वैज्ञानिक
दृष्टि से इस विषय को समझने वाली तो उन्हें सम्भवतः एक
आध अल्प शिक्षित दाई ही मिली। हाँ, इतना अवश्य है कि
प्रसव के समय अत्यन्त संकट उपस्थित हो जाने पर—जिस
समय कि अन्य उपस्थित लोग भूखित के समान हो जाते हैं—वे
दाइयों बड़े धारण कर मुस्कराते हुए मुँह से प्रसूता को साँबना
देने की चेष्टा करती हैं, और इन की यह सहायता एक डाक्टर की
सहायता के समान ही लाभकारी होती है। यह भी ध्यान रखना
चाहिए कि गर्भावस्था, प्रसव, तथा उस के पश्चात् शक्ति उपार्जन
के समय में चिकित्सक भवना इस विषय के विरोध की अपेक्षा
भी वे दाइयों अधिक सहायक होती हैं क्योंकि गर्भिणी की अवस्था
तथा होने वाले शारीरिक परिवर्तन का ज्ञान, जब तक उसे
देखते रहने से, उन्हें प्रायः चिकित्सकों की अपेक्षा अधिक
प्राप्त है।

कुछ शिक्षित नव युवतियों ने अपनी प्रथम गर्भावस्था, तथा

भारी कपड़ा के उपयोग का

भारी कपड़ा न पहरा जाय ।। या कम से कम गर्म के ऊपर से ही इस प्रकार के कपड़ा का व्यवहार बिल्कुल बंद किया जाय । जो नियम गर्भावस्था में भी इस प्रकार के कपड़ा पहनती रहती हैं उन्हें वह कह बहुत अधिक मात्रा में अनुभव होता है । शरीर हट और बचपन से स्वास्थ्य ठीक रहने पर इन साधारण नियमों के पालन से वह बिल्कुल मतलबने तथा घबराहट की बीमारी कभी समीप नहीं जा सकती ।

31 (क) कोई भी भारी तथा तंग कपड़ा न पहरा जाय । बिल्कुल हल्के तथा खुले कपड़ों का व्यवहार किया जाय । ऊंची ऐसी के और नोकदार तंग जूतों की जगह साधारण, हल्के जूते पहनने चाहिए ।

32 (ख) भारी और तले हुए पदार्थों तथा मिठाई से परहेज करना चाहिए । मसालों का भी प्रयोग बचा सम्भव नहीं करना चाहिए । जहां तक हो सके हरी सब्जी, रसीले फल, दूध तथा हल्के शक्तिप्रवर्धक का प्रयोग करना चाहिए ।

33 (ग) प्रातः काल प्रातरा के समय चाय के स्थान में नारंगी के रस का व्यवहार करना चाहिए । यदि साधारण स्वास्थ्य बाली स्त्री इन नियमों का यथाशक्ति पालन करे तो गर्भावस्था के नौ महीनों में एक मिनट के लिए भी जी मतलबाना या घबराहट नहीं होगी ।

34 गर्भावस्था में प्रातः कोष्ठ बहता (कब्जी) की भी शिकायत होने लगती है और इस से अनेक रोगों का जन्म हो जाता है । यदि भोजन को नियमित रखा जाय तो कब्जी की सम्भावना बहुत कम होती है । यदि इस पर भी शिकायत हो तो राह और लाल आटे की रोटी का प्रयोग करना चाहिए । इस के साथ ऐसे व्यायाम

और सकल करने का प्रयत्न करना चाहिए। एक बहुत सख्त
 व्यायाम यह है कि सीने लगे हो कर घुटनों में बिना एक पैर
 शरीर के ऊपर के भाग को झुका कर पृथ्वी को छुना जाय।
 नारम्य में कुछ कठिन होगा इस लिए हाथ जितने अधिक भूमि
 के निकट जा सके उतना ही अधिक उन्हें नीचे से जाने का प्रयत्न
 करना चाहिए जबवा कस्तपोरा या भूमि पर पीठ के बल लेट कर
 टांगों को सीधा रख शरीर के ऊपरी हिस्से को ऊपर उठाना
 चाहिए। यह ध्यान रखना चाहिए कि हाथों से जबवा बाहों से
 भूमि को छुना न जाय, हाथ सिर के पीछे की ओर अंकुरे रहें।
 इसी प्रकार यह भी हो सकता है कि पीठ और बाहें भूमि पर
 लगी रहें और टांगें सीधी अंकुरी हुई ऊपर को उठाई जाय और
 फिर नीचे छाई जाय। इस प्रकार जिस समय तक कष्ट अनुभव
 होना शुरू न हो निरन्तर नियम पूर्वक व्यायाम करने से किसी भी
 कृत्रिम और अस्वाभाविक वस्तु की सहायता की आवश्यकता
 अनुभव न होगी। इन का तथा इसी प्रकार के अन्य उपयोगी
 व्यायामों का विस्तृत वर्णन डा० एलिस स्टॉकहम की 'टोकोलोजी'
 (Dr. Alice Stockham's Tokology) में देखा जा सकता है।

कई स्त्रियों, यूरोपियन, लेडियों की नकल कर के कमर को
 पतली करने के लिए एक जास्त डंग की पेटी, जिसे कोर्सेट
 कहते हैं, व्यवहार में लाने लगी हैं। चाहे यह कोर्सेट कितनी
 भी नरम और ढीली क्यों न हो कमर के पिछले भाग पर इस
 के स्पर्श मात्र तथा शरीर पर जटके रहने से इस का बोझ पड़ता
 है और इतना बोझ भी गर्भावस्था में प्रातःकाल होने वाले कष्ट-

गिरने या किसी अन्य सन्तान के लिए तो कोई ऐसा हानिकारक नहीं क्योंकि यह तो एक सरल पदार्थ में और माता के लचकदार कटु में इस प्रकार सम्मिलन रहता है कि इस प्रकार की किसी चोट का असर उस तक नहीं पहुँच सकता परन्तु स्वयं माता के शरीर को गिरने या झटका लगाने से हानि पहुँचने की पूरी ज़रूरत रहती है। शुरुआत केन्द्र में होने वाला यह परिवर्तन बहुत शीघ्र अनुभव हो जाता है जिस से माता को अपना शरीर संभालने में विशेष उत्सर्जन नहीं होती। यह हम खूब जानते हैं कि आरम्भ में बालक को भी अपने शरीर का बोझ पैरों पर संभालने में कितना अधिक समय लगता है और यह काम कितना कठिन जान पड़ता है। माता को तो इस कठिनाई का अनुभव अपनी सम्पूर्ण आयु पर्यन्त करना पड़ता है। शरीर के एक विशेष भाग में अन्य भागों की अपेक्षा बोझ बढ़ जाने से शरीर के अनुपात में फरक आ जाता है। इस लिए माता को चलते फिरते समय और विशेष कर ऊपर से नीचे की ओर जाते समय सदा ध्यान रखना चाहिए। गर्म स्थित सन्तान की कोई भी चेष्टा या हरकत माता को एक दम पकड़ दे सकती है। सीढ़ियों उतरते समय तो यह खास तौर पर आपत्ति का कारण हो सकती है। इस लिए माता को चाहिए कि ऊँचा बढ़ते या उतरते समय लटकी हुई रस्सी या रेलिंग को दृढ़ता से बाम रखे।

माता के शरीर में कितनी भी शक्ति, उत्साह और क्रियाशीलता क्यों न अनुभव होती हो, उस के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि वह संभ्या को आठ नौ बजे बिस्तर पर जरूर लेट जाय और

1

2

3

4

5

6

7



१२. गर्भावस्था और समागम

सम्बन्ध के आरम्भिक काल से समाज में स्त्री के अधिकारों
अनुचित बहिष्कार होता आ रहा है। वर्यापि कुछ समय से
शिक्षित समाज में स्त्री ने अपने अधिकारों की थोड़ा बहुत फिर
ताना आरम्भ किया है परन्तु फिर भी मनुष्य समाज के बड़े भाग
में अभी तक भी स्त्रियों के अधिकारों की अपेक्षा की जा रही है।
अशिक्षित, असम्बन्ध प्राप्त और निर्धन समाज अब तक अपनी
स्त्रियों की कौन सम्पत्ति की ओर निगमों में जा रहा है। वे लोग
कहते हैं कि स्त्रियों का अधिकार मनुष्य समाज में नहीं है और स्त्री के
आपत्तय मनुष्य समाज में आरम्भिक अवस्था की परत में ही रह जाते हैं।
वस्तुतः स्त्री मनुष्य के अति आरम्भिक अवस्था में ही रह जाती है।
कहते हैं कि स्त्रियों का अधिकार मनुष्य समाज में ही रह जाता है।
आपत्तय प्राप्त और आरम्भिक अवस्था में ही रह जाती है।
स्त्रियों को उस समय भी क्षमा नहीं कर सकते जब कि वे प्रसव
के पश्चात् अभी परत पर ही होती हैं। ऐसे लोगों के सम्बन्ध में
हमें कुछ नहीं कहना क्योंकि उनके समान नीच और कौन होगा ?
समाज में इस प्रकार के नीच पुरुषों के वर्तमान होने का प्रभाव
कठम कोटि के व्यक्ति पर अवश्य पड़ा है और उन्होंने स्त्री
अधिक के अधिक होने वाले इस अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ उठाई

दोनों गङ्ग आतिथान में खो जाते थे । प्रातः काल मेरी पत्नी
 ४ पुष्पन के साथ बिस्तर पर से उठ बैठती थी ।
 गान सभी प्रकार से सुन्दर स्वस्थ और प्रतिभावा
 ती है ।
 डा० मेरी स्तोत्र आगे लिखती हैं कि मैंने उस बच्चे
 को देखी है और वस्तुतः बालक के विषय में माता पित
 र की ठीक है ।

महात्मा टाल्सटॉय ने गर्भावस्था में तथा तदुपरान्त
 जब तक माता बालक का पोषण अपने स्तन से करा
 । प्रसंग का सर्वथा निषेध किया है । सम्भव है इस महापु
 षारों का प्रभाव अनेक सुरक्षित व्यक्तियों पर पड़ा हो
 व इतना कह देना चाहते हैं कि टाल्सटॉय इस विषय के
 ता नहीं थे और उन के अनेक विरोधात्मक सिद्धान्तों के
 सम्मति भी अमान्य ठहराई जा सकती है ।

हमारे उपर्युक्त कथन से किसी को यह न समझ लेना
 । हम गर्भावस्था में सभी प्रकार के स्त्री पुरुषों के लिए स
 त्त्विक समझते हैं । यदि स्त्री की इस कार्य के प्रति आ
 । तो उस के कल्याण की कामना से मूल कर भी इस का
 हा करना उचित नहीं ।

उष्ण कोटि की स्त्रियों में से बहुतों में कामेच्छा बहुत
 मात्रा में होती है । इस प्रकार की स्त्रियों के हृदय में ग
 नि पर समागम की इच्छा उतनी भी नहीं होती । यह स

१३. गर्भ का क्रमिक विकास

अपि आरम्भ में माता के गर्भस्थ आन्तरिक परिवर्तन का कोई चिह्न माता के शरीर पर प्रकट नहीं होता, परन्तु गर्भस्थिति के क्षण से ही माता के अन्दर एक हरकत शुरू हो जाती। कई बार उन्हें गर्भस्थिति के वास्तविक क्षण का ज्ञान हो जाता और शुरू के दो तीन दिन तक गर्भाशय में एक विचित्र सुस्पर्श के सदृश संवेदन का अनुभव होता रहता है। यह अनुभव होता है कि इने पीछे का जगह नहीं मिलता और यह

मनुष्य उपर्युक्त बात पर विश्वास कर सकेंगे। परन्तु भावुक शक्ति सीमा पर अनुभव का निर्भर होने से इसे असम्भव नहीं कहा जा सकता। अधिकांश मनुष्यों की अनुभव शक्ति इतनी प्रबल नहीं होती। वे अपने शरीर में होने वाले सूक्ष्म परिवर्तनों को उद्धार नहीं सकते। इसी प्रकार अनेक स्त्रियों को दो तीन मास अपने सामान्य जीवन में कोई परिवर्तन अनुभव ही नहीं होता। यदि सुरक्षित माता पिता सन्तान की कामना से अत्यन्त गम्भीरता और प्रसन्नता पूर्वक समागम करते हैं, तो उन्हें अपने सन्तान के जीवन का प्रथम चरण ही नहीं देखने का अवसर

ह से संयुक्त होते ही इस पर एक पतली, सिस्ली का आवरण आता है जो अन्य कीटाणुओं को उस से मिलने से रोकता है। दिव्य और वीर्य कीटाणु के संयोग के क्षण से उन में परिवर्तन हो जाता है। संयुक्त पिंड धीरे धीरे गर्भाशय की ओर प्रसरता है और वहां जा कर गर्भाशय की दीवार से चिपक जाता है। इतना हो जाने पर भी हानि की आशंका बनी ही रहती है। दिव्य और वीर्य कीटाणु के सशक्त और सर्वथा उचित अवस्था में संयुक्त होने पर तथा गर्भाशय की दीवार से सट जाने पर भी वहां स्थिर रहने की शक्ति की कमी के कारण अथवा गर्भाशय के पट्टों के हिलने जुड़ने से गर्भ स्थानांतरित हो कर नष्ट हो सकता है। अस्तु, जो कुछ भी हो उपर्युक्त आपत्तियों के अभाव में ही तथा वीर्य कीटाणु के संयोग के क्षण से ही सन्तान के शरीर निर्माण का कार्य आरम्भ हो जाता है।

सम्मिश्रित पिण्ड या बीज के गर्भाशय में उचित रूप से स्थापित होने पर कुछ दिनों में ही उस में परिवर्तन तथा वृद्धि आरम्भ होती है और तन्तुओं तथा पेशियों का आवरण सा उसे घेर लेता है जिस के द्वारा माता के शरीर से शरीर निर्माण के लिए आवश्यक पदार्थ बालक के शरीर में प्रविष्ट होते रहते हैं।

दिव्य तथा वीर्य कीटाणु के संयोग के पश्चात् तुरन्त ही एक स्त्रीय गति से क्रिया आरम्भ हो जाती है। पहले दिव्य तथा वीर्य कीटाणु का पूर्ण मिलन होता है तदनन्तर दिव्य तथा वीर्य कीटाणु के बारह बारह मूल भागों का पूर्ण संयोग होता है और माता के इस सूक्ष्मतर शारीरिक भागों पर सन्तान का अंग निर्माण आरम्भ होता है। इस पृष्ठ सन्तान के शरीर के पट्टों की बन

इस प्रकार प्रकट नहीं होता। और मजबूत है कि प्रथम एक मास तक बच्चे गर्भाशय का कुछ अनुभव ही न हो। गर्भ स्थिति का समय से प्रथम बिन्दु बुझने के बड़ा पर प्रकट होता है। मास में स्वास्थ्य जितना भी अधिक अच्छा होगा उतना ही शीघ्र छेद स्तनों में फटोरता उत्पन्न हो जायेगी। स्वस्थ स्त्री के स्तनों तथा गर्भस्थिति के दूसरे समाह में ही यह विकास प्रकट हो जायेगा। परन्तु प्रथम प्रसव के पश्चात् तीन मास से पूर्व किसी प्रकार कोई बिन्दु प्रकट नहीं होता।

छठे समाह तक गर्भस्थ बालक के शरीर में हाथ पैर इत्यादि लगे लग जाते हैं और इसी समय जननेन्द्रिय का बनना प्रारम्भ हो जाता है। इस से स्पष्ट है कि इस काल के पश्चात् मास के लिए गर्भस्थ संतान को लड़की अथवा लड़के का रूप देना की चेष्टा करना व्यर्थ है और बहुत अंशों में यह प्रयत्न और अन्य संतान के लिए हानिकारक भी हो सकती है जैसा कि हम आगे बोलेंगे अध्याय में बल कर विस्तार पूर्वक समझाने की चेष्टा करेंगे।

दूसरे मास की समाप्ति तक बालक के सभी अंगों के विकास हो जाते हैं। यहां तक कि आंखों की पलके निकल आती हैं, नाक उभरने लगती है और हाथ पैर की उंगलियों का बनना प्रारम्भ हो जाता है। किसी २ स्थान की हड्डियाँ—उदाहरणतः पसलियाँ—इस समय तक पकने लग जाती हैं।

तीसरे मास की समाप्ति तक गर्भ का आकार लगभग ३-३ इंच के हो जाता है और वजन भी प्रायः अर्द्ध औंस तक बढ़ जाता है। यह समय विशेषतः जननेन्द्रियों के विकास का है और

वह तरल पदार्थ जिस मात्रा में रहता है उसी अनुपात में उस का
 घेद बढ़ जाता है। अनेक बार बालक का आकार अपेक्षा कृत छोटा
 होने पर और तरल पदार्थ के अधिक होने से भी आकार बहुत
 अधिक बढ़ जाता है। चौथे पांचवें मास तक तो उदर वृद्धि का
 मुख्य कारण बालक नहीं बल्कि वह तरल पदार्थ ही होता है।
 तीसरे मास के अन्त तक बालक की कुछ मुख्य हड्डियों के बढ़ होने
 के साथ ही साथ उस के शरीर का पूरा पिंजर भी तैयार हो जाता
 है। बालक के शरीर की अनेक हड्डियां तो प्रसव के पर्याप्त समय
 यन्त्रात् तक पकती रहती है। पांचवें महीने के अन्त तक बालक
 का वजन छः से आठ आठमास तक और आकार सात से नौ इंच
 तक हो जाता है। इस समय निद्रावस्था के अतिरिक्त सभी समय
 बालक की अंग चेष्टा का अनुभव बहुत स्पष्ट होता रहता है। इस
 लिए ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि बालक को उसी समय सोने
 का अभ्यास पड़े जो समय माता के सोने का हो। शायद इस
 कर्म से अनेक डाक्टरों तथा सन्तान वाली माताओं का आश्चर्य
 होगा परन्तु हमारा दृढ़ निश्चय है कि इस प्रकार अभ्यास बालना
 बहुत फलदायी नहीं। इस समय (पांचवें मास) से ले कर प्रसव तक
 तक गर्भस्थित सन्तान का एक पूर्ण व्यक्तित्व होता है इस लिए
 उस पर किसी प्रकार का प्रभाव डाल सकना असम्भव नहीं। यदि
 दृग्गोपी मादरा रूप से स्नेह की रस्ती में बंधे हुए हैं और माता
 पिता दोनों ही अपने उत्तर दायित्व की अनुभव करते हैं तो बालक
 में पिता के प्रति एक प्रकार का आकर्षण होना निताम्य स्वाभाविक
 है। डा० ह्योप्स ने अपनी पुस्तक में ऐसे दो परिवारों का वर्णन
 किया है जिनमें ने प्रसव से पूर्व ही अपने बालक पर अनेकानेक

लड़कों में से अधिकांश की शारीरिक अभ्यास बहुत कम होती
 ।। कम की शारीरिक अभ्यास प्रकृति की प्रतीति को लड़के में
 प्रसन्न होती है ।
 अनेक बार गर्भस्थिति का अनुमान ठीक न होने से भी बालक
 का जन्म सातवें मास में सम्भव लिखा जाता है और कई बार प्रायः
 विवाह से पूर्व ठहरे हुए गर्भ के फलक से बचने के लिए भी इस
 कहाने की शरण ली जाती है । परन्तु समस्तवार व्यक्ति की आंख
 से इस प्रकार का भेद दिखा रहना सम्भव नहीं । एक सुन्दर स्वस्थ
 बालक को—जिस के नख और त्वचा इत्यादि सभी अंग पूर्णतः
 विकसित हैं—देख कर यह विश्वास करना कठिन है कि उस का
 जन्म सातवें मास में हुआ है ।
 अन्त के दिनों में गर्भपात के लिए सब से अधिक भयानक
 समय सातवां मास है । जब तक इस का कोई वैज्ञानिक तथा
 सन्तोषप्रद कारण हमें नहीं मिल सका । केवल अनुमान के आधार
 पर ही हम कह सकते हैं कि सम्भवतः यह विकासवाद के सिद्धान्त
 के अनुसार हमारी पूर्व पीढ़ी के शारीरिक अभ्यासों का अवरोध
 है, बहुत पहली पीढ़ियों के अभ्यासों का, जब अभी हमने मनुष्य
 रूप धारण भी नहीं किया था । यह कितने विस्मय की बात है
 कि अनेक मानव जातियाँ में प्रसन्न ठीक सातवें मास के अन्त में
 होता है । शायद इसी अभ्यास के कारण मनुष्य स्वभाव में गर्भस्थ
 शरीर के अवयवों के पूर्ण हो जाने पर उसे छोड़ देने के लिए
 प्रकृति होने लगती है ।
 इस के शारीरिक गर्भस्थ का बोझ बहुत मय प्रति मास उन
 दिनों में भी रहता है जो मासिक धर्म के होने चाहिए । (यदि गर्भ

भी सिद्धान्तों में कुछ भी सत्य हो परन्तु वैज्ञानिक आधार पर
जो सब इस दृष्टि से कि सिद्धान्त का जहाँ जहाँ का मकसद है।

1. प्रथम सिद्धान्त का आधार यह है कि पुरुष और स्त्री के बीच
होने वाला सम्बन्ध एक ही है कि वह पुरुष और स्त्री के बीच का सम्बन्ध
होना चाहिए कि वह पुरुष और स्त्री के बीच का सम्बन्ध होना चाहिए;

2. दूसरे सिद्धान्त के अनुसार स्त्री और पुरुष के सम्बन्ध के
समय ही उनके पारस्परिक प्रभाव से मातृ सन्तान की जाति

जबकि स्त्री का निर्माण होता है। तब ही पुरुष और स्त्री के सम्बन्ध
का निर्माण होता है। तब ही पुरुष और स्त्री के सम्बन्ध का निर्माण होता है।

3. तीसरे सिद्धान्त के अनुसार सन्तान के स्त्री तथा जाति का
निर्णय उस के इन्ट्रिन्सिक-फैक्टर्स के समय ही होता है। तब ही पुरुष और स्त्री के सम्बन्ध का निर्माण होता है।

पहले सिद्धान्त का आधार यह है कि स्त्री-पुरुष के सहित
अण्डकोष से निकले हुए रज-वीर्य में पुत्र उत्पन्न करने की और
बायें अण्डकोष से निकले हुए रज-वीर्य में पुत्री उत्पन्न करने की
शक्ति होती है। पुरुष के सहित अण्डकोष से निकला हुआ पदार्थ
स्त्री के सहित कोष से निकले हुए पदार्थ के साथ, और बायें से
निकला हुआ पदार्थ बायें से ही मिलता है। यद्यपि कुछ ऐसे
वदन्तार्थ इस प्रकार की पेश की जाती हैं जिन में उक्त नियम से
इन्फ़रानुसार ही पुत्र या पुत्री उत्पन्न हुई हैं तो भी वैज्ञानिक लोग
कई बार अपने परीक्षणों में निश्चिन्त करते परिणाम पर पहुँचते हैं

दूसरे और तीसरे सिद्धान्त का कोई क्रियात्मक आधार नहीं
है। इस विषय के सभी क्रियात्मक परामर्श—बाहेर के किसी

होता है। इस अवस्था में एक स्वस्थ तथा पौष्टिक भोजन करने वाला माँ की अंतर्गत निर्मित तथा कम पौष्टिक भोजन करने वाली स्त्री का गर्भ भोजन के स्तर में न केवल अधिक अंश ले कर लिंग निर्णय के सम्बन्ध में हमारे अनुमान को गलत कर सकता है। यदि लिंग निर्णय के सम्बन्ध में हमारा उपर्युक्त सिद्धान्त भी मान लिया जाय तो भी यह अनुमान करना कि गर्भ के बीज को पौष्टिक भोजन मिल रहा है या नहीं, अथवा लड़का उत्पन्न होगा या लड़की मनुष्य की सामर्थ्य से बाहर है।

हमारी कल्पना में इस समय एक नया अवस्थाओं के अनुसार
यह बात वैज्ञानिक सिद्धान्त के रूप में कही जा सकती है कि
जीवन्त में कुलम पर माता की मानसिक अवस्था का प्रभाव
इस सम्बन्ध ही नहीं बल्कि अवश्य है । इस सिद्धान्त की
हि इस विज्ञान की दूसरी शक्तियों से भी कर सकते हैं ।

हमारी मानसिक अवस्था का प्रभाव न केवल हमारे विचारों
पर भावों पर ही पड़ता है बल्कि हमारा शारीरिक संगठन भी
इसे प्रभावित होता है । इसे सिद्ध करने के लिए हमारे पास
कई तरह के साधन हैं । जहाँ पर हम केवल एक स्पष्ट उदाहरण
। अपने कथन की व्याख्या सिद्ध करने की चेष्टा करेंगे ।
प्रभावित प्रसव के पश्चात् माता का सम्बन्ध में कोई शारीरिक
सम्बन्ध नहीं रहता बल्कि इस अवस्था में जब तक बालक माता
के दूध पर निर्भर रहता है यदि माता की कोई मानसिक क्लेश
रहने लगे परिणाम स्वरूप बालक को भी अवचन की शिकायत
हो सकती है । इसे किसी प्रकार का दौरा माने जा सकता है ।
माता के शरीर से यह प्रभाव बालक के शरीर में दूध के द्वारा
पहुँचता है । माता के शरीर के अनेक तन्तुओं के बहिर्गम हो जाने
से दूध की बनावट की रसायनिक क्रिया में परिवर्तन पड़ जाता है
और बालक पर इस का विपरीत प्रभाव पड़ता है । यदि केवल दूध
के सम्बन्ध से शरीर के दूधक दूधक होने पर मानसिक विकारों
का प्रभाव इतना स्पष्ट पड़ जाता है तो उस समय जब कि बालक
माता के शरीर का एक भाग होता है, माता के मायु समूह से
उस का शरीर बनता रहता है, माता के श्वास से वह श्वास
लेता है, माता का गर्म ही उस का संसार होता है ।

परिवर्तनों पर एक बार परम्परा: एभि नैदाने पर हम बहुत सरलता से जान सकते हैं कि माता के शरीर में उत्पन्न होने वाले भिन्न २ रसों पर माता की इच्छा वा मानसिक अवस्था का कितना गहरा प्रभाव पड़ता है और भिन्न २ अंगों की क्रिया प्रति क्रिया में उस से कितना अधिक परिवर्तन हो जाता है। इन परिस्थितियों में माता सन्तान पर परम्परा तक चलने वाले अनेक प्रभाव उत्पन्न कर देती और परम्परागत अनेक प्रभावों को निर्मूल कर देती है। इस प्रकार हमारी सम्मति में माता अपने शरीर के रसों की उत्पत्ति में रासायनिक परिवर्तन द्वारा गर्भस्थ सन्तान पर यथेष्ट प्रभाव डाल सकती है और उन्हें आगामी सन्तान के लिए पैरुक्त सम्पत्ति बना सकती है।

परम्परागत गुण तथा परिस्थिति दोनों का प्रभाव ही मनुष्य का आचार बनाने में सहायक होता है परन्तु इन दोनों से अधिक गहरा प्रभाव माता सन्तान पर गर्भावस्था के नौ मास में डाल सकती है।

अनेक बार ऐसा भी देखा गया है कि माता के गर्भावस्था में अस्वस्थ तथा असाह्यहीन होने पर भी बालक दृष्ट पुष्ट तथा सशक्त उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार की घटनाओं से उपर्युक्त सिद्धान्त के प्रति स्वभावतः अत्राया होने लगती है परन्तु तनिक सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर स्पष्ट विदित हो जायगा कि बालक के स्वस्थ होने का कारण माता को पैरुक्त सम्पत्ति में मिला हुआ अच्छा शरीर है। अपने साधारण स्वास्थ्य की शक्ति से उसने गर्भावस्था के अस्थायी स्वास्थ्य के प्रभाव को रोक लिया है। इस अवस्था में यदि गर्भावस्था में माता का स्वास्थ्य अपेक्षाकृत अच्छा रहता तो

1
1

,

,
.
.

परिवर्तनों के कारणों को अच्छी तरह समझ लेती है, सन्तान के आचार व्यवहार को देख कर उसे उस के गर्भ में होने के समय के अपने विचारों का ध्यान आ जाता है।

इस प्रकार का एक अत्यन्त उत्कट उदाहरण अंग्रेजी साहित्य के प्रसिद्ध कवि आस्कर वाइल्ड के चरित्र से मिलता है। आस्कर वाइल्ड कुछ कोटि के कवि होते हुए भी आचार हीनता के लिए बहुत बुरा नाम थे, यहाँ तक उन्हें इस प्रकार के अपराध में जेल भी जाना पड़ा था। आस्कर वाइल्ड की माता ने एक समय अपनी एक सहेली के सम्मुख स्वीकार किया था कि जिस समय आस्कर वाइल्ड गर्भ में था उस समय मेरी यह प्रबल इच्छा थी कि मेरे गर्भ से कन्या का जन्म हो और सदा मैं इसी प्रकार के मनन और कल्पना में रत रहती थी। बहुत सम्भव है गर्भस्थ पुरुष सन्तान पर माता की विपरीत भावना के प्रभाव ने ही उस की वृत्तियों को इतना अधिक विषम और प्रबल बना दिया हो।

इस विषय में माता की शक्ति और सामर्थ्य का अनुमान लगाने के लिए पर्याप्त उदाहरण मिलने कठिन हैं। इस का पहला कारण तो यह है कि माता को स्वयं इस बात का ध्यान नहीं रहता कि वह किस प्रकार के विचारों में रत रहती है इस के अतिरिक्त जिस समय सन्तान युवावस्था को प्राप्त होती है तथा उस की वृत्तियाँ और गुणों के उत्कट रूप में प्रकट होने का समय आता है, उस समय अनेक माताएँ उपस्थित ही नहीं होतीं और जो होती हैं, उन की स्थिति में एक आध बात के सिवाय कुछ शेष नहीं रहता।

इस प्रकार के ठीक उदाहरण सभी इकट्ठे हो सकते हैं यदि सन्तान की गर्भावस्था से ही माता बादशाहत के लिए अपने

हमें का सम्मान होना चाहिए। मनुष्य तथा ताम्र कल, संघ
 वस्तु हैं। इसके तथा पौष्टिक भोजन न केवल सन्तान के
 शरीर निर्माण के लिए ही आवश्यक हैं परन्तु स्वयं माता के
 स्वास्थ्य तथा शक्ति की रक्षा के लिए भी जरूरी हैं। गर्भिणी के
 आहार के विषय में अनेक विद्वानों ने कई पुस्तकें लिखी हैं और
 भी ने माता तथा सन्तान दोनों के स्वास्थ्य तथा सौन्दर्य का
 आहार माता के भोजन को ही माना है।

स्नेही दम्पती के लिए उचित है कि वे अपनी सन्तान के
 आगमन से बहुत पहले ही, जब कि वह अभी रुंसार की दृष्टि
 पर माता के गर्भ में है, उस की, उपस्थिति को अनुभव करने
 न बल करें। परन्तु ऐसा करते हुए उन्हें उसे लड़की या लड़के
 का रूप नहीं देना चाहिए अन्यथा इस में उसी आपत्ति की अंशका
 होगी जिस का कि वर्णन हम अंग्रेज कवि ऑस्कर वाइल्ड के
 आहरण में कर आए हैं। अनेक बार किन्हीं विरोध कारणों से
 माता पिता सन्तान के बालक अथवा बालिका होने के इच्छुक
 होते हैं। भारतवर्ष में तो प्रायः सदा ही लड़का पैदा होने की
 इच्छा की जाती है। यह प्रवृत्ति बहुत घृणित है। लड़का हो या
 लड़की सन्तान सभी अवस्था में माता पिता का अंश और उन के
 काम का बन्धन है। लड़कों की ओर विशेष रुचि होने का कारण
 हमारे समाज का आर्थिक संगठन और वंशानुक्रम का तरीका है।
 कुछ लोगों का विचार है कि ज्येष्ठ सन्तान से ही, चाहे वह लड़का
 हो या लड़की, वंशक्रम चलना चाहिए। कुछ भी हो इस प्रकार
 लड़के और लड़की में भेद करना उचित नहीं, कम से कम प्रथम

हमारे गृहस्थ जीवन की अशांति का प्रधान कारण हमारे अपने-व्यक्तित्व के सम्बन्ध में हमारी अज्ञानता है। यह अज्ञानता ही हमारे विचारों तथा भावनाओं की उस भिन्नता तथा प्रत्यक्ष विरोधाभासों का भी कारण है जो कि हमारे जीवन पर पर्याप्त गहरा प्रभाव डालते हैं।

लड़कियों का विवाह किस आयु में होना चाहिये इस विषय पर बहुत से भिन्न भिन्न मत हैं। कुछ लोग जीवन के आरम्भ में ही विवाह के पक्षपाती हैं। उन का कहना है कि सोलह वर्ष की अवस्था में लड़की पूर्ण रूप से माता होने के योग्य हो जाती है और इस समय तक उस की सभी मानसिक तथा शारीरिक शक्तियों का विकास पूर्ण रूप से हो जाता है। इन लोगों का यह विश्वास इस अनभुति पर आधारित है कि 'लड़कियाँ लड़कों की अपेक्षा बहुत शीघ्र बुरा हो जाती हैं'। वे लोग अपने कथन की पुष्टि के लिए अनेक छोटी अवस्था की माताओं की स्वस्थ संतान के उदाहरण भी उपस्थित करते हैं। इन लोगों का यह भी विश्वास है कि इस अवस्था में, परिष्कृत जीवन की अपेक्षा प्रथम संतान का प्रसव कम कष्टप्रद होता है। परन्तु अपने वैज्ञानिक अनुभव के

१४. स्त्रियों की विभिन्न श्रेणियां

(विवाह योग्य आयु की दृष्टि से)

हमारे गृहस्थ जीवन की अशांति का प्रधान कारण हमारे अपने व्यक्तित्व के सम्बन्ध में हमारी अज्ञानता है। यह अज्ञानता ही हमारे विचारों तथा भावनाओं की उस भिन्नता तथा प्रत्यक्ष विरोधाभासों का भी कारण है जो कि हमारे जीवन पर पर्याप्त गहरा प्रभाव डालते हैं।

लड़कियों का विवाह किस आयु में होना चाहिये इस विषय पर बहुत से भिन्न भिन्न मत हैं। कुछ लोग जीवन के आरम्भ में ही विवाह के पक्षपाती हैं। उन का कहना है कि सोलह वर्ष की अवस्था में लड़की पूर्ण रूप से माता होने के योग्य हो जाती है और इस समय तक उस की सभी मानसिक तथा शारीरिक शक्तियों का विकास पूर्ण रूप से हो जाता है। इन लोगों का यह विश्वास इस जनश्रुति पर आधारित है कि 'लड़कियां लड़कों की अपेक्षा बहुत शीघ्र पुरा हो जाती हैं'। वे लोग अपने कबान की पुष्टि के लिए अनेक छोटी अवस्था की माताओं की स्वस्थ संतानों के उदाहरण भी उपस्थित करते हैं। इन लोगों का यह भी विश्वास है कि इस अवस्था में, परिपक्व जीवन की अपेक्षा, प्रथम संतान का

१५, स्त्रियों की विभिन्न श्रेणियाँ

(विवाह योग्य आयु की दृष्टि से)

हमारे गृहस्थ जीवन की अशांति का प्रधान कारण हमारे अपने व्यक्तित्व के सम्बन्ध में हमारी अज्ञानता है। यह अज्ञानता ही हमारे विचारों तथा भावनाओं की उस भिन्नता तथा प्रत्यक्ष विरोधाभासों का भी कारण है जो कि हमारे जीवन पर पर्याप्त गहरा प्रभाव डालते हैं।

लड़कियों का विवाह किस आयु में होना चाहिये इस विषय पर बहुत से भिन्न भिन्न मत हैं। कुछ लोग बौवन के आरम्भ में ही विवाह के पक्षपाती हैं। उन का कहना है कि सोलह वर्ष की अवस्था में लड़की पूर्ण रूप से माता होने के योग्य हो जाती है और इस समय तक उस की सभी मानसिक तथा शारीरिक शक्तियों का विकास पूर्ण रूप से हो जाता है। इन लोगों का यह विश्वास इस अनुभूति पर आधारित है कि 'लड़कियाँ लड़कों की अपेक्षा बहुत शीघ्र युवा हो जाती हैं। वे लोग अपने कंवनों की पुष्टि के लिए अनेक छोटी अवस्था की माताओं की स्वस्थ सन्तान के उदाहरण भी उपस्थित करते हैं। इन लोगों का यह भी विश्वास है कि इस अवस्था में, परिपक्व जीवन की अपेक्षा प्रथम सन्तान का प्रसव कम कष्टप्रद होता है। परन्तु अपने वैज्ञानिक अनुभव के

सत्ताइस वर्ष की अवस्था से पूर्व विवाह के योग्य नहीं होती। सन्तानोत्पत्ति के योग्य तो वे प्रायः पैंतीस वर्ष की अवस्था में होती हैं। उन के जीवन में सन्तान उत्पत्ति का तब से उत्तम समय बासीस वर्ष की आयु के लगभग रहता है और उन की इस आयु में बहुत हुई सन्तान ही देश तथा जाति के लिए अभिमान की वस्तु हो सकती है।

डा० मेरी स्टोन्स ने उपर्युक्त सिद्धान्त प्रायः यूरोपियन समाज के निम्न अनुभवों पर तथा अपने परिचय के क्षेत्र से प्राप्त पत्रों के आधार पर निश्चित किये हैं। वहाँ के लिए ये सिद्धान्त ठीक हैं क्योंकि ठंडे देशों में ये प्रवृत्तियाँ देर से प्रकट होती हैं और गरम देशों में कुछ जल्दी। इस लिए भारतवर्ष में विवाह योग्य अवस्था १५-१६ से २३-२४ वर्ष की आयु तक समझनी चाहिए। उनकी एक सखी ने तो वहाँ तक लिखा है कि यद्यपि उस का विवाह कई वर्ष पूर्व हो चुका था परन्तु उस ने सन्तानोत्पत्ति अथवा पुरुष प्रसंग की इच्छा को ५० वर्ष की आयु से पूर्व कभी अनुभव नहीं किया। इस प्रकार की विलम्ब से युवावस्था को प्राप्त होने वाली स्त्रियों का विवाह यदि ठीक समय पर किया जाय और उन का किसी योग्य तथा स्वस्थ मनुष्य से सम्बन्ध हो तो पूर्ण आशा है कि उन का जीवन सुदीर्घ काल के लिए स्थिर रहेगा और आयुभर उन में स्वास्थ्य तथा जीवन शक्ति की न्यूनता न होगी। इस त्रेणी की स्त्रियाँ समाज में सदा ही रही हैं और अब भी वर्तमान हैं। छोटी आयु में विवाह होने से उन्हें अनेक यन्त्रणाओं का बोझ उठाना पड़ता है और अनेक प्रकार की कृत्रिमताओं तथा कष्टों में से गुजरना पड़ता है जिस से उन का जीवन नितान्त

अवस्था की लड़कियाँ लगभग 30 वर्ष (हमारे यहाँ 23-28) की आयु में विवाह के योग्य होती हैं।

उपपुत्र भातों को अवरन सभी प्रकार के स्त्री पुरुषों पर लागू करने के पक्ष में हम नहीं हैं। हम यह स्वीकार करते हैं कि अनेक लड़कियाँ बहुत जल्दी अर्थात् 16-18 (हमारे यहाँ 18-24) वर्ष की अवस्था में पूर्णतः युवा हो कर संतानोत्पत्ति के योग्य हो जाती हैं और उन का विवाह इस आयु में ही हो जाना ठीक है।

इन दो श्रेणियों की स्त्रियों के जीवन के प्रायः सभी मार्गों में अनेक भिन्नताएँ पाई जाती हैं। उदाहरणतः जिस प्रकार की स्त्रियों का वर्णन हम बारहवें अध्याय में कर आये हैं (वह स्त्रियाँ जिन्हें गर्भावस्था में पुरुष संग की इच्छा और आवश्यकता रहती है) अधिकांश में देर से युवा होती हैं। यह तो सभी जानते हैं कि हमारी समाज में अनेक नस्लों (Races) का सम्मिश्रण है परन्तु इस विचार की यहाँ आवश्यकता ही नहीं। एक नस्ल के लोगों में और एक ही परिवार में कुछ लड़कियाँ देर से और दूसरी जल्दी युवा होने वाली हो सकती हैं। यहाँ तक कि एक ही माता पिता की संतान, दो सहोदर बहनों में से, छोटी बहन उस समय, पूर्ण जीवन को प्राप्त हो कर संतानोत्पत्ति के योग्य हो सकती है जब कि अभी बड़ी बहन निरी बालिका ही हो। जिन्हें लोगों के परिचय का क्षेत्र विस्तृत है उन्हें इस तरह के उदाहरण प्रति दिन के जीवन में देखने के लिए मिल सकते हैं। यदि प्राणिशास्त्र के विद्वान् तथा दूसरे वैज्ञानिक अनेक अन्य विषयों की अपेक्षा स्त्रियों के इन भेदों तथा उन की प्रकृति गुण, और विभिन्न आवश्यकताओं पर विचार करें तो विशेष लाभ होगा।

स्त्रियों की विभिन्न जेनियाँ

बड़े बौद्ध है। परन्तु यदि माता पिता यह चाहते हों कि चाहे उन की सन्तान उतनी इष्ट पुष्ट न हो परन्तु बुद्धि के विचार से वह अद्भुत आविष्कारक हो, वा प्रसिद्ध कवि हो, अथवा उस की नियामक शक्ति का लोहा संसार में माना जाय, अनेक पीढ़ियों तक इतिहास के पृष्ठों पर उन की सन्तान का नाम उज्ज्वल अक्षरों में लिखा जाय तो उन्हें चाहिए कि सन्तानोत्पत्ति के कार्य को पर्वीण समय के लिए स्थगित कर दें। इस प्रकार की सन्तान की कामना करने वाले पुरुषों को चाहिए कि देर से यौवन प्राप्त करने वाली स्त्रियों से विवाह करें जिन के हृदय में सन्तान की कामना लगभग पैंतीस चालीस वर्ष की आयु में हो।

हम प्रायः समाज में देखते हैं कि अमीर परिवारों की सन्तानों में छोटे लड़के अपने बड़े भाइयों की अपेक्षा प्रायः अधिक चतुर और बुद्धिमान् पाये जाते हैं। यह ठीक है कि सिद्धान्त रूप से यह बात नहीं कही जा सकती परन्तु फिर भी इस के काफी उदाहरण मिलते हैं। डा० मेरी स्टोप्स के विचार में इस का कारण यह है कि प्रथम सन्तान की उत्पत्ति के समय माता अभी बालक के भ्रूण को पूर्ण रूप से विकसित करने के योग्य नहीं हो पाती और विरोधतः जब कि वह देर से युवावस्था को प्राप्त होने वाली जेनी की हो।

छोटी उमर के विवाह के पोषकों की एक और युक्ति पर हमें यहां विचार करना है। उन लोगों का कहना है कि विवाह के समय को स्थगित करने से और इच्छा पूर्वक सन्तान की संख्या का निग्रह करने से जाति के लिए कई योग्य पुरुषों के खो देने की सम्भावना हो सकती है। उन का कहना है: वृटिरा साम्राज्य का

स्त्रियों की विभिन्न जेनियाँ

कबेह मौजूद है। परन्तु यदि माता पिता यह चाहते हों कि बच्चा उन की सन्तान जल्दी इष्ट पुष्ट न हो परन्तु बुद्धि के विचार से वाञ्छित आविष्कारक हो वा प्रसिद्ध कवि हो अथवा उस का नियामक गति का, छोटा संसार में जाना जाय, अनेक पीढ़ियों तक इच्छास के पृष्ठों पर उन की सन्तान का नाम उज्ज्वल अक्षरों में लिखा जाय तो उन्हें चाहिए कि सन्तानोत्पत्ति के कार्य पर पर्याप्त समय के लिए स्थगित कर दें। इस प्रकार की सन्तान प्रकामना करने वाले पुरुषों को चाहिए कि देर से यौवन प्राप्त कर बाकी स्त्रियों से विवाह करें जिन के हृदय में सन्तान की कामना लगभग पैंतीस चालीस वर्ष की आयु में हो।

हम प्रायः समाज में देखते हैं कि अमीर परिवारों की सन्तान में छोटे लड़के अपने बड़े भाइयों की अपेक्षा प्रायः अधिक धन और बुद्धिमान पाये जाते हैं। यह ठीक है कि सिद्धान्त रूप में यह बात नहीं कही जा सकती परन्तु फिर भी इस के कारण उदाहरण मिलते हैं। डा० मेरी स्टोप्स के विचार में इस का कारण यह है कि प्रथम सन्तान की उत्पत्ति के समय माता अभी बाल के भ्रूण को पूर्ण रूप से विकसित करने के योग्य नहीं हो पाती और विशेषतः जब कि वह देर से युवावस्था को प्राप्त होने वाली जेनी की हो।

छोटी उमर के विवाह के पोषकों की एक और युक्ति पर हमें यहाँ विचार करना है। उन लोगों का कहना है कि विवाह समय को स्थगित करने से और इच्छा पूर्वक सन्तान की संख्या का नियंत्रण करने से जाति के लिए कई योग्य पुरुषों के खो देने की सम्भावना हो सकती है। उन का कहना है ब्रिटिश साम्राज्य

इंग्लैण्ड की जनन विज्ञान परिषद् ने तथा कुछ अन्य लै-
 ङ्कियों ने भी निम्न तौर पर कुछ उदाहरण माता पिता की अवस्था
 तथा परिस्थिति के सन्तान पर प्रभाव पड़ने के सम्बन्ध में प्रकाशित
 किये हैं परन्तु उन में माता की जेनी का कोई भी उल्लेख न होने
 से वे सब निरर्थक हैं और उन से कई भूलों के हो जाने की
 सम्भावना है।

इस अध्याय में स्वान स्वान पर आयु की जो संख्यायें दी गई
 हैं वे डा० मेरी स्टोप्स के अपने अनुभव पर आश्रित हैं। इंग्लैण्ड
 तथा वसी के जैसे अन्य शीतप्रधान देशों के लिए वे ठीक होंगी
 परन्तु भारतवर्ष की दृष्टि से वे बहुत ऊँची प्रतीत होती हैं। यहां के
 लिए उक्त संख्याओं में से ४-५ वर्ष घटा लेने चाहिए।

निजमूर्तक जीवन व्यतीत किया है और कोई कुपय नहीं किया तो कोई कारण नहीं कि प्रसव काल में उसे विरोध कष्ट हो, और कोई सांवातिक प्रभाव उस के शरीर पर शेष रह जाय। परन्तु जिस प्रकार हमारे समाज में स्त्रियों के स्वास्थ्य में कमरा कम होती जा रही है और प्रसव काल दिन दिन भयंकर होता आ रहा है इसे देखते हुए बही जान पड़ता है कि सम्भवतः प्रसव काल में प्रत्येक स्त्री के लिए आपरेशन (operation) की आवश्यकता हुआ करेगी।

प्रसव के बाद स्त्री के बहुत दिन तक बिस्तर पर लेटे रहने से मांस पास के सम्बन्धियों को असुविधा अनुभव होती है इस लिए सम्भवतः लोगों की प्रवृत्ति उसे जल्दी बिस्तर छोड़ने के लिए उत्तेजित करने की ओर होती जा रही है। कुछ लोगों के विचार में प्रसव के बाद दस दिन के अन्दर ही स्त्री को रोय एक-दो घंटे के लिए बारपाई छोड़ देनी चाहिए और रानें रानें कमरे के अन्दर कुछ कदम चलना आरम्भ कर देना चाहिए बहुत सी स्त्रियाँ इस बात का अभिमान करती हैं कि हम प्रसव के बाद दस दिन में, सात दिन में या दो-तीन दिन में ही बिस्तर से उठ लकी हुई हैं। डा० मेरी स्टोप्स लिखती हैं कि इस प्रकार अभिमान करने वाली स्त्रियों में से मुझे एक भी ऐसी दिखाई नहीं दी जिस का स्वास्थ्य और शारीरिक अवस्था ठीक हो। आप ने लिखा है कि इस विषय पर मैंने जितनी स्त्रियों से बात की है उन में से केवल एक ने यह स्वीकार किया था कि वो पुराने विचारों के अनुसार प्रसव के बाद एक मांस तक बिस्तर पर आराम करने के पश्चात् उठ कर घर के काम काज में प्रवृत्ति

र विज्ञान पर आश्रित हैं। स्त्री के शरीर पर न केवल प्रसव के
 वं ही अपितु उस से पहले गर्भधारण के समय भी बहुत
 तक बोझ पड़ता है और विभ्रान्ति होती है। उस के पेटों और
 पेशियों को अनेक तनाव और झटकों को सहन करना
 पता है। इस अवस्था में उस के शरीर को पुनः सुव्यवस्थित
 के लिए कितने अधिक विभ्राम की आवश्यकता है यह
 तानी से ही समझ में आ सकता है। इस के अतिरिक्त गर्भाशय
 कि मांसा के शरीर के बिल्कुल मध्य में और प्रधान अंग है गर्भ
 छ में बहुत अधिक फैल चुका होता है और इस समय पुनः
 कुछ कर अपने स्थान में आने का यत्न करता है। यह क्रिया बहुत
 त्वपूर्ण, कठिन और पेचीदा है और इस के पूर्णतः शान्ति पूर्वक
 सकने के लिए पूर्ण विभ्राम की अत्यन्त आवश्यकता है।
 अपि गर्भाशय की, मांस पेशियों द्वारा कनी हुई इन दीवारों ने
 कुचने का बहुत कुछ कार्य पहले एक दो दिन के भीतर ही
 आता है परन्तु फिर भी इस के ठीक से अपने स्थान में सुव्यव
 ष्ठ होने और स्थायी रूप से छोटा आकार धारण करने
 का समाप्त का समय लग जाता है। इस से यह स्पष्ट है कि इस
 समाप्त के समय में गर्भ का आकार और आयतन साधारण
 अवस्था से अधिक बढ़ा हुआ रहता है और मामूली से झटके से
 थाम भट हो सकता है। साथ ही शरीर के पेटे नौ मांस के
 मेरुस्थल बोझ और इतने अधिक क्रिये रहने के कारण निर्बल
 हो चुके होते हैं। इस लिए यह आवश्यक है कि इस समय स्त्री
 बचने फिरने के कारण पड़ने वाले तनाव से अपने शरीर के पेटों
 की रक्षा करे। हाँ यदि वह बिस्तर पर पीठ या छाती के आर से

जन्म अवस्थाओं तथा कठों से मुक्त हो जाता है और कठे पिघले न जाँस के निरन्तर बोल से निर्मल हो जाने के कारण उसे सम्मान करने में असमर्थ होते हैं। इस अवस्था में आन्तरिक अवस्थाओं से दिकने जुड़ने से उन का अव्यवस्थित हो जाना बहुत सम्भव है। इस लिए इस प्रकार के मय की आरांका से बचने के लिए हम सप्ताह व्यतीत हो जाने से पूर्व शरीर को किसी प्रकार की हरका न देनी चाहिए।

डाक्टर मेरी स्टोप्स लिखती हैं, जब मैं दस दिन अथवा एक सप्ताह में, परिस्थितियों से बिचरा हो कर या अज्ञान बरा सुबत आताओं को बिस्तर से उठ कर चलते फिरते देखती हूँ तो अत्यन्त बिस्मय और दुःख से अपने मन में यह सोचती हूँ कि इस पन्द्रह वर्ष पश्चात् इन शिवों की न जाने क्या अवस्था होगी यदि इस अवस्था में वे शरीरालय के बिचलित होने तथा सम्पूर्ण रोगों में फँसने और सम्पूर्ण धारण की शक्ति से हीन होने का बच जाँव तो वे निश्चय ही भाग्यवान् होंगी, परन्तु दुर्भाग्य ऐसी भाग्यवान् शिवों की संख्या प्रति दिन घटती ही जा रही है। परिस्थिति से बिचरा होकर अमवा अज्ञानता के कारण उन विभिन्न रोगों का शिकार बनना ही पड़ता है। हमारे विचार उचित समय से पूर्व किसी की को बिस्तर छोड़ने देना भारी अपरा और अत्याचार से कम नहीं है। कुछ अपेक्षाकृत अच्छे स्वास्थ्य वाली अनुभव हीन शियां समझती हैं कि पूर्ण युवावस्था तथा पञ्चमर में इस प्रकार की मय की आरांका करना निर्मल है। उन विचारमें शरीर के सुट्ट होने और आयु के पर्याप्त हो जाने पर गम शय के बिचलित हो जाने की सम्भावना नहीं रहती परन्तु य

अन्य अवयवों तथा पट्टों से पूरक हो जाता है और पट्टे पिछले नौ मास के निरन्तर बोझ से निर्बल हो जाने के कारण उसे सम्भाल सकने में असमर्थ होते हैं। इस अवस्था में आन्तरिक अवयवों के हिलने जुलने से उन का अन्ववस्थित हो जाना बहुत सम्भव है। इस लिए इस प्रकार के भय की आशंका से बचने के लिए इस सप्ताह व्यतीत हो जाने से पूर्व शरीर को किसी प्रकार की हरकत न देनी चाहिए।

डाक्टर मेरी स्टोप्स लिखती हैं, जब मैं उस दिन अथवा एक सप्ताह में, परिस्थितियों से विवश हो कर या अज्ञान बरा युवत माताओं को बिस्तर से उठ कर चलते-फिरते देखती हूँ तो मैं अत्यन्त विस्मय और दुःख से अपने मन में यह सोचती हूँ कि इस पन्द्रह वर्ष पश्चात् इन स्त्रियों की न जाने क्या अवस्था होगी यदि इस अवस्था में वे गर्भाशय के विचलित होने तथा तत्सम्बन्ध रोगों में फँसने और सन्तान धारण की शक्ति से हीन होने से बच जाय तो वे निश्चय ही भाग्यवान् होंगी, परन्तु दुर्भाग्य से ऐसी भाग्यवान् स्त्रियों की संख्या प्रति दिन घटती ही जा रही है। परिस्थिति से विवश होकर अथवा अज्ञानता के कारण उन विभिन्न रोगों का शिकार बनना ही पड़ता है। हमारे विचार उचित समय से पूर्व किसी की को बिस्तर छोड़ने देना भारी अपराध और अत्याचार से कम नहीं है। कुछ अपेक्षाकृत अच्छे स्वास्थ्य वाली अनुभव हीन स्त्रियाँ समझती हैं कि पूर्ण युवावस्था तथा पक्ष कमर में इस प्रकार को भय की आशंका करना निर्मल है। उन विचार में शरीर के मुट्ठ होने और जानु के पर्वत हो जाने पर गर्भाशय के विचलित हो जाने की सम्भावना नहीं रहती परन्तु य

है। बुढ़ीय की बोटियों और सिंहनी इत्यादि अन्य पशुओं के लौकिक में प्रसव के पश्चात् कुछ भी अन्तर नहीं पड़ता। इस का कारण यही है कि प्रसव के पश्चात् वे जीव पर्याप्त समय तक विराम करते हैं। सिंहनी बहुत समय तक अपनी गुफा में नवजात शिशु के साथ बैठ कर मीठा किवा करती है और सिंह उस के आहार की चिन्ता करता है इस के विपरीत प्राण्य पशुओं में गाय, भैंस, कुतिया जबवा गवही एक प्रसव के पश्चात् कुछ भी विश्राम नहीं करती हैं। कारण यही है कि उन्हें प्रसव के बाद विराम के लिए समय नहीं मिलता। इतने स्पष्ट उदाहरणों के सम्मुख होते हुए भी क्या मनुष्य जाति के अंग पर होने वाले अत्याचार के विषय में कुछ कहने की आवश्यकता है।

इसी प्रसंग में हम एक और विषय पर प्रकाश डालना चाहते हैं कि किस प्रकार प्रकृति के निर्देश के अनुसार चलने से लाभ और उस के विपरीत जाने से हानि होती है। अगले अध्याय में हम शिशु के अधिकारों पर कुछ कहेंगे परन्तु यह बात हम इसी स्थान पर कह देना चाहते हैं कि प्राकृतिक नियम के अनुसार वह शिशु का अधिकार है कि वह माता के स्तन से आहार ग्रहण करे। जिस समय शिशु स्तन पान करता है उस समय माता के शरीर और गर्भाशय में एक प्रकार की स्फूर्ति का अनुभव होता है इस से न केवल शिशु ही दुग्ध पान से लाभ उठाता है अपितु माता के गर्भ में होने वाली स्फूर्ति से गर्भाशय के अपने नियत स्थान में सुखस्थित होने में भी सहायता मिलती है।

और आकर्षण को जीवित आगूत रखने के लिए सौन्दर्य रख
आवश्यक है। पूर्ण युवावस्था में एक स्त्री को सम्मान धारण
कारण बिड्डुड मही और बेडौड अवस्था में देख कर ए
नवयुवतो कुमारों के हृदय पर क्या प्रभाव पड़ सकता है व
समझना कुछ कठिन नहीं। माताओं का अपने सौन्दर्य को रख
के लिए सबेरा रहना शर्मा नहीं अपितु समाज के प्रति कर्तव्य।

और आकरैय को जीवित जागृत रखने के लिए सौम्यत्व का
 आवश्यक है। पूर्ण युवावस्था में एक लड़की को सन्तान धारण
 कारण बिडबुड मरी और बेडोड अवस्था में देख कर, ए
 नवयुवती कुमारी के हृदय पर क्या प्रभाव पड़ सकता है ?
 समझना कुछ कठिन नहीं। माताओं का अपने सौम्यत्व को र
 के लिए सचेत रहना स्वार्थ नहीं। अविभुः सम्राट के प्रति कर्म
 बाधन है।

1922

1923

1924

1925

अनेक अनुभवहीन मजदूरी मजदूरों को, जिन्हें सहायता देने के लिए शिक्षित जाया भी प्रयुक्त रहती है अत्यन्त परिश्रम और कष्टों द्वारा जय मज्जान का तोंक तरह से खनक-पाकन करने के लिए किसी सहायकार अथवा पत्रपत्रिका की आवश्यकता रहती है। बहुत सी पुस्तकें उन्हें इस विषय में मदद दे सकती हैं। जहां ऊर्ध्वी बातों को दोहराने का कोई लाभ नहीं।

शिष्ट के औसिक अधिकारों के सम्बन्ध में हमें अधिक कुछ नहीं कहना केवल प्रथम अधिकार अर्थात् 'जन्म से पूर्व वंश की आवश्यकता अनुभव की जाय' इसी पर ही कुछ बोझ सा विचार करना है क्योंकि इस पर लोग कुछ भी ध्यान नहीं देते।

शिष्ट का वह अधिकार-उस का वैयक्तिक अधिकार है और सामाजिक दृष्टिकोण से विरोध महत्व पूर्ण है। समाज के हित की दृष्टि से बच्चा उस समय तक उत्पन्न नहीं किया जाना चाहिए जब तक माता पिता उसे योग्य बनाने का सारा भार उठाने को सैबार न हों।

इस पुष्टि की निरुद्ध जन संख्या का अधिकार विना माता पिता की इच्छा के, केवल उन के मनोबल की दृष्टि के दृष्ट स्वरूप उत्पन्न होता है। यही अवाञ्छित सन्तान ही समाज की अशान्ति का मुख्य कारण है। हजारों परिवार ऐसे हैं जिन में विना नांगा हर साल एक न एक बच्चा पैदा हो जाता है। इस से जहां माता के स्वास्थ्य को बुरा पहुँचता है वहां साथ ही समाज में भी अशान्ति बढ़ती जा रही है। नीचे उद्धृत किये गये दो-तीन पत्रों से—जो कि Women's Co-operative Guild द्वारा संगृहीत Maternity, letters from working women से लिये गये



जल्दा जल्द के बारे में ज्ञान करता है। जाता छत्तर होता
 तुम्हें एक ओकर में रख कर आई बां का फूँको को एक
 में उस के निकलने की कथा उसे सुनानी है। बाय
 करियों की मोहक कथा की भाँति इस तरह बचपन को सुनाना
 उसे भाव मान जाता है। वह अपने स्वभाव—जिज्ञासु स्व
 के कारण वहाँ प्रसन्न पिर प्रसन्न, बहः बहः बहः बहः का
 कर बैठा है वहाँ उस के गहन कः ऊँ, और कल्पित
 बहः सुनाना जाता है।
 इस बड़े हो जाने पर बालक को जितना अधिक निर्बो
 बेसमय समझते हैं वह प्रायः कतना बेसमय नहीं होता। ब
 तो समझ ही जाता है कि उसे शूठ बात बताई गई है इस के
 ही उसे शूठ बोलने की शिक्षा भी मिलनी आरम्भ हो जाती है
 यदि माता से पूछा जाय तो वह अपने इस शूठ बोलने
 कारण वही बतावगी कि अबोध सरल सन्तान के सन्मुख। ब
 म्य की रहस्य कथा कहना कुछ सरल काम नहीं है। इस
 लक के भवभीत हो जाने को भी सम्भावना को जा सकती
 मेरी स्टोप्स की सम्मति में ये विचार ठीक नहीं। वे अप
 एक में लिखती हैं,—“सरलता का तात्पर्य है केवल शुद्ध अ
 व ज्ञान”। तीन चार या पाँच वर्ष की अवस्था में बालक
 संसार भर की सभी वस्तुएँ विस्मय कारक होती हैं औ
 उन सभी बातों पर एक समान भाव से विश्वास भी क
 ता है इस लिए यदि उस के सन्मुख सत्य का प्रकाश कर दिया
 गा तो वह उसे भी शंका रहित भाव से स्वीकार कर
 उस अवस्था में शिक्षा को सफल

अपने गुप्त अंगों अथवा अपनी जननेन्द्रिय को भी देख लेते हैं। डाक्टर मेरी स्टोप्स की सम्मति में, "किसी भी व्यक्ति के मापी जीवन का निर्भर इस समय माता द्वारा उस की जननेन्द्रिय के प्रति किये गये व्यवहार पर अथवा इस सम्बन्ध में उसे दी गई सीख पर रहता है।"

कुछ लोगों के विचार में लड़के, लड़कियों को अपने इन अंगों के विषय में कुछ समझाने के लिए उचित समय दस अथवा बारह वर्ष की आयु है। कुछ लोग इस में आपत्ति करते हैं, उन के विचार में यह बहुत जल्दी है इस समय तक बालक या बालिका कुछ भी समझने के योग्य नहीं हो सकते। परन्तु डा० मेरी स्टोप्स के विचार में यह बहुत अधिक देर है। वे लिखती हैं, "सन्तान के अपनी जननेन्द्रिय के सम्बन्ध में शिक्षा देने और मनुष्य की उत्पत्ति के ढंग के बारे में उसे समझाने का ठीक समय दो अथवा तीन बरस की आयु है।" वे कहती हैं—

"इस बहुत ही सीधे सरल विषय में ठीक ठीक समझाई गई बातों का प्रभाव बालक पर बहुत अच्छा और पर्याप्त मात्रा में पड़ेगा। बालक की श्रुतियों आरम्भ से सीधे मार्ग की ओर मुक्त आवेगी।"

"जब ठीक है कि इस अवस्था में सुने हुए प्रत्येक शब्द के बालक अपनी स्थिति पर टिका कर नहीं रख सकेगा। परन्तु इस सीख का प्रभाव उसे जन्म भर मार्ग दिखाने के लिए पर्याप्त होगा।" और यदि माता इस समय बालक के प्रश्नों के उत्तर प्रदान अथवा दे कर टकता रहेगी और उसे इस ओर से अज्ञान रक्खेगी तो इस का असर भयानक हो सकता है।

आरम्भ कर दें। सम्भवतः कुछ सज्जनों को हमारा यह विचार अनुकूलिंसंगत जंजेगा। वे आपत्ति करेंगे कि इस आयु में सीखी सुनी बातें कभी स्मरण रह ही नहीं सकतीं। उन का यह विचार बिल्कुल ठीक है और हम भी इसे मानते हैं परन्तु उन शब्दों के स्मृति पर रहे बिना भी उन के कहने और प्रकट करने के ढंग से बालक पर पर्याप्त गहरा प्रभाव पड़ जाता है जो आयु भर दूर नहीं हो सकता।

इस के पश्चात् मनुष्य की आयु में दूसरा समय तीन से ले कर पांच वर्ष की आयु तक होता है। इस समय की हुई शिक्षा और अभ्यास बहुत अंश तक अपने वास्तविक रूप में बालक के हृदय और मस्तिष्क के भीतर जड़ पकड़ लेते हैं। आयु अधिक हो जाने पर भी इस समय की अनेक स्मृतियाँ हमारे दिल में बनी रहती हैं। अपनी इस सरल अवस्था में पूछे हुए प्रश्नों की याद अचानक परिपक्व अवस्था में हमारे ओठों पर मुस्कराहट फेर देती है। इस समय की स्मृति यद्यपि थोड़ी होती है परन्तु वह बहुत स्पष्ट और गहरी होती है परन्तु शोक का विषय है कि इस समय का प्रयोग केवल सन्तान पर कुसंस्कारों के प्रभाव के जमने के लिए ही हो पाता है। प्रत्येक माता पिता का यह कर्तव्य है कि सन्तान द्वारा पूछे गये प्रत्येक प्रश्न का उत्तर सावधानी से सरल और मधुर शब्दों में ठीक ठीक दें। नहीं कहा जा सकता कि किस समय पूछे गये किस प्रश्न का कितना गहरा प्रभाव पड़ेगा ?

अनेक माता पिता अपनी सन्तान के सन्मुख सत्य का प्रकाश कर देने के लिए इच्छुक रहते हैं परन्तु उचित उपाय का ज्ञान उन्हें नहीं रहता। विरोध कर जो बातें अन्यायी की धारणा में

विचार। बालक प्रायः सभी बातों को अनेक बार पूछते हैं और उन्हें इसमें आनन्द आता है। एक बार सुनी हुई कहानी को बालक अनेक बार स्वयं कह कर सुनते हैं और प्रसन्न होते हैं। छोटी आयु में ही बालक बहुत जल्दी झूठ और सच में भेद करने लगते हैं परन्तु उमर बढ़ आने पर हमें अपनी बचपन की बातें भूल जाती हैं जिससे हम इस का अनुमान नहीं कर सकते और गलती का जाते हैं। इस लिए उचित यही है कि कभी भी अपने चातुर्य का भरोसा कर के बालकों के सामने झूठ न बोला जाय।

चार वर्ष में फिर अनेक नवीन प्रश्नों की बारी आयेगी परन्तु यदि इस से पूर्व दो से ले कर पांच वर्ष की अवस्था तक सन्तान को ठीक उत्तर दिये जा चुके हैं तो आगे के प्रश्नों का ठीक उत्तर देना कुछ भी कठिन न होगा और न बालक और माता के बीच में संकोच का पर्दा आ उठा होगा।

उपर्युक्त बातों के ही जान लेने से कोई भी बालक सभी आवश्यक बातों को नहीं जान आता। अनेक बातें उसे रानें, रानें सीखनी होती हैं परन्तु इतना अवश्य है कि इस आधार पर नवीन और आवश्यक विषयों के समझने में उसे सुगमता रहती है और सत्य सिद्धान्तों को जानने और समझने के लिए उसे अपनी पहली जानी सुनी बातों के विरुद्ध नई बातें नहीं सुननी पड़ती।

अपने विचार के अनुसार कुछ शब्द हम ने यहां लिख दिये हैं परन्तु सभी विचारशील मनुष्यों का कर्तव्य है कि आवश्यकता और परिस्थिति के अनुसार स्वयं अच्छे से अच्छा उपाय सोच कर बालकों की कुसंस्कारों से रक्षा करने का पूर्ण प्रयत्न करे।

की किसी ग्युनिस्सिरेखिडी का रमित्तर देला जा सकता है। वह तो किसी से बिना नहीं कि जमीर जोग सम्मान के बिना सदा ही बरसते रहते हैं और निर्बलों को अपनी सम्मान का सम्भालना भी कठिन हो जाता है। एक तो वही निर्बल घरों में जमीर घरों की अपेक्षा बच्चों की सखु प्रति रातक दुगनी होती है तिस पर कम के बहाँ सम्मान का अन्ये भी प्रति रातक दुगना होने से कोई संख्या बीगुनी के लगाने हो जाती है अर्थात् यदि जमीर भाता को एक बार सम्मान शोक का कट उठाना पड़ता है तो निर्बल भाता को अपनी ही भातु में बार बार यह असह्य दुःख भोगना पड़ता है। इन बच्चों की बीमारी के सबब निरन्तर चिन्ता तथा दुबाई और डाक्टर का लार्ब अवस्था को और भी अधिक शोचनीय बना देता है।

इस आर्थिक हानि के सिवाय समाज को और भी कई तरह की हानि सहनी पड़ती है। उस बालक को उत्पन्न करने और उसे पालने पोसने में उस की माता की इसनी अधिक शक्ति व्यर्थ नष्ट हुई। दूसरे बालकों की ओर आवश्यक ध्यान न दिया जा सकने के कारण उन के भी स्वास्थ्य में हानि हुई, स्वयं पति को भी अनेक कष्ट सहने पड़े। इसी प्रकार और कई नुकसान भी समाज को एक ऐसे निर्बल बच्चे के उत्पन्न होने और शीघ्र मर जाने से पड़ते।

इस बड़ी हुई सखु संख्या का मुख्य कारण अज्ञान है। सब से पहली बात जिसे ध्यान में रखना आवश्यक है, यह है, कि संसार में कोई भी बालक तब तक उत्पन्न न किया जाय जिस समय तक

1000

1000

२०. नवीन स्वस्थ नस्ल की उत्पत्ति

माता पिता के हृदय में सन्तान के प्रति अगाध स्नेह पर ही मनुष्य समाज का अस्तित्व आश्रित है। वृम्पती के हृदय में न केवल सन्तान के लिए प्रबल इच्छा ही होनी स्वाभाविक है परन्तु सन्तान की असमर्थ और असहाय अवस्था में उस के लिए विनिर्दिष्ट रहना भी वन की प्रकृति में सम्मिलित है। यदि मनुष्य में यह प्रकृति न होती तो आज से अनेक शताब्दी पूर्व ही मनुष्य का बिन्दू पृथिवी पर से छूट गया होता।

सन्तान के प्रति प्रेम और चिन्ता की प्रकृति न केवल मनुष्य स्वभाव का अंग है प्रत्युत प्राणी मात्र में यह एक समान पाई जाती है। जो प्राणी जितनी ऊँची भेगी का होता है अपनी सन्तान के प्रति वह उतना ही अधिक उत्तरदायित्व अनुभव करता है।

यही अवस्था मनुष्य की भी है। अपनी शिक्षा और सामाजिक परिस्थिति के अनुसार मनुष्य अपनी सन्तान के भविष्य की चिन्ता करते हैं। एक कृषक भयभीत मजदूर का पुत्र दस या बारह बरस की अवस्था में काम चन्दों में सहायता देने लग जाता है। परन्तु एक प्रतिष्ठित ज्ञानदान का नवयुवक पच्चीस तीस बरस तक केवल 'कार्य ही' लक्ष्य करता है और यदि सामर्थ्य हो तो संसार की यात्रा किये बिना उस की शिक्षा को पूर्ण नहीं समझा जाता।

समाज में योग्यता के दर्जे को ऊँचा करने के लिए वह आवश्यक

'मे' आने हन लोगों में' फिर 'अप' से मुक्त होवे 'की' इतनी
 तक आकांक्षा क्यों रहती है। कोई कृपा अप' केरा' रह' अप'
 'र' कह' अप' अप' अप' अप' अप'। बीमार, लंगड़े, लूटे, पागल,
 स्वहवास सभी इस अप' से मुक्त होने के लिए बड़े उत्सुक' रहते
 हैं। वे समझते हैं न केवल वह उन का अधिकार है परन्तु एक तरह
 से उन का 'फर्ज' है कि अपने पीछे अपने ही समान व्यक्ति
 समाज में जरूर छोड़ जायें। हम पूछते हैं समाज में ऐसे लोगों
 की क्या जरूरत है। प्राचीन समय में यूनान में ऐसे लोगों को
 चुन चुन कर मार दिया जाता था और इसी लिए सारे संसार में
 उस समय यूनान के डंके बजते थे। परन्तु आज हमारे देश में
 तो सन्तान पैदा हो जाय, यही सब से बड़ा सौभाग्य समझा जाता
 है चाहे वह कोढ़ी हो, अंधी हो या देखने में खुरी हो। देश और
 मनुष्य मात्र का हित चाहने वाले प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि
 इस प्रकार के विषाक्त विचारों का विरोध करे। हमें पता है कि
 एक आदमी के पिता माता को तपेदिक (क्षय) था या है, उस का
 विवाह कर दिया जाता है और उसे अधिकार दिया जाता है कि
 वह सन्तान उत्पन्न करे। एक आदमी दमे से मर रहा है परन्तु
 सन्तान उत्पन्न किये बिना नहीं रह सकता। इस का अर्थ क्या है ?
 यही है कि जितने बच्चे वह उत्पन्न करे उतने ही घराने 'मविष्य'
 में क्षय और दमे का धर धन जायें। वैदिक विवाह में जब युवक
 और युवती के विवाह समय जो विरादरी के सब मनुष्य एकत्र
 होते थे उस का अर्थ ही यह था कि सब उत्तरदाता लोग देखेंगे
 कि सम्बन्ध समाज के लिए अनिष्टकारी तो नहीं। आज यदि
 विवाह के इच्छुक मनुष्य में दोष दिखाओ तो क्या लु सज्जन कहेंगे

आज से अधिक स्वस्थ और समर्थ न हो। इस के साथ ही इस बात पर भी ध्यान देना जरूरी है कि नवीन खतान को जल्द अपने बाजों की अपनी शारीरिक सम्पत्ति क्या कुछ है क्योंकि क्ती पूंजी से ही तो नये शरीर का निर्माण होना है, इस लिए यह अतिवश्यक है कि दम्पती के शरीर बिल्कुल स्वस्थ और निर्दोष हों। माता को इस बात का पूरा ध्यान करना चाहिए कि गर्भ काल में उसे कोई रोग न हो।

आशावाधियों और सुधारकों की कल्पनाओं के अनुरूप वर्तमान समाज के सुन्दर, सुदौल, स्वस्थ स्त्री, पुरुषों से संगठित होने के मार्ग में दो मुख्य रुकावटें हैं। पहली रुकावट अज्ञान है। जैसा कि हम ऊपर भी कह आये हैं समाज का एक मुख्य भाग अपनी वास्तविक पतित अवस्था से बिल्कुल बेखबर है उन के हृदय में किसी प्रकार की उन्नति या सुधार की आशा भी नहीं है। इन लोगों के समीप पहुँच कर अनुत्साह और निराशा के ज्वरी पर्व को उन के सामने हटा कर उन्हें आशा का सुन्दर प्रकाश दिखा कर उत्साहित करना सरल कार्य नहीं है।

दूसरी और बड़ी बाधा समाज में इस प्रकार की एक जेणी की मौजूदगी है जिन में अनेक पोढ़ियों से पैतृक निर्बलता घर करती चली आ रही है और जिन की सभी शारीरिक और मानसिक शक्तियों का पूर्ण हास हो चुका है। ये लोग सामाजिक कुदृष्टियों और संकीर्णता के कीचड़ में बहुत गहरे फंसे हुए हैं। इन की शक्ति और सामर्थ्य का नश्वर दिन प्रति दिन और भी अधिक होत आ रहा है इन लोगों की संख्या बरसात के कीड़े पतंगों की तरह बढ़ रही है। इन लोगों का निर्वाह समाज के दूसरे वर्गों के

लिए अपीक करते हैं।
 रोष रहे दूसरी जेनी के लोग, जिन के जीवन में सुधार की कोई आशा ही नहीं। वह जेनी मनुष्य समाज के लिए कलंक के समान है और बीमारी के समान इन की संख्या दिन प्रति दिन बढ़ रही है। इन से समाज को बचाने का केवल एक ही उपाय है और वह यह कि इन्हें उत्पादक शक्ति से हीन कर दिया जाय। स्वयं इन लोगों में इतनी बुद्धि और कर्तव्य का ज्ञान नहीं कि इस कार्य से परहेज कर समाज के ऊपर बोझ न बढ़ाएं। इस लिए उपर्युक्त उपाय के सिवाय और कोई चारा नहीं। यूरोप में अनेक परीक्षणों के पश्चात् इस कार्य के लिए दो उपाय खोज निकाले गये हैं। पहला है Castration अर्थात् नपुंसक बनाना। इस में घोड़े आदि पशुओं के समान स्त्री पुरुषों की बीर्य रक्षक ग्रन्थियां नष्ट की जाती हैं और उन के लिए प्रसङ्ग का कोई अवसर ही नहीं रहने दिया जाता। परन्तु यह कार्य बड़ा क्रूरता पूर्ण है। इस में उत्पादक शक्ति से हीन होने के साथ शरीर और मन को बड़ा घाव पहुँचता है और मनुष्य बिल्कुल किसी काम का नहीं रहता। इस लिए इसे न्यायोचित नहीं कहा जा सकता।
 दूसरी विधि है Sterilization अर्थात् पुरुष या स्त्री को बाँझ कर देना। इस में उतना अधिक परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। पीड़ा भी अधिक नहीं होती पुरुष और स्त्री सम्भोग भी कर सकते हैं केवल सन्तानोत्पत्ति की सम्भावना नहीं रहती। पुरुष या स्त्री की शारीरिक अवस्था, मानसिक शक्ति में कोई न्यूनता भी नहीं हो पाती, जीवन के रोष सब काम के अन्य साधारण मनुष्यों की भाँति उसी प्रकार कर सकते हैं।

परिशिष्ट क

गर्भस्थिति के लक्षण

अनेक बार अनुभव के न होने से नवयुवता के लिए यह जानना कठिन हो जाता है कि गर्भ स्थिर हो गया है अथवा नहीं। सब से उत्तम परामर्श ऐसी परिस्थिति में यही हो सकता है कि वह किसी, समझदार दाई अथवा डाक्टर की सलाह ले ले। परन्तु सभी अवस्थाओं में यह परामर्श सम्भव नहीं होता। अनेक अवसरों पर ऐसी कोई विश्व दाई मिल ही नहीं सकती और सब से बड़ी अड़चन एक युवती के सम्मुख संकोच की रहती है। इस लिए हम यहां इस सम्बन्ध में कुछ स्थूल लक्षण सब साधारण के ज्ञान के लिए लिखे देते हैं।

(१) गर्भस्थिति का पहला और मोटा चिन्ह जिस के विषय में किसी को आपत्ति नहीं हो सकती मासिक धर्म का बन्द हो जाना है। इस समय इस के बन्द होने से स्वास्थ्य में कोई खराबी नहीं होती है प्रत्युत शरीर में अधिक स्फूर्ति और मुख पर अधिक सौन्दर्य बिकने लगता है।

(२) ज्यों-ज्यों गर्भ का समय बीतता जाता है, स्तनों के आकार में वृद्धि होती जाती है, उन पर की नीली रंग के नसे स्पष्ट दिखाई देने लगती हैं, और उन के आस-पास का रंग गहरा हो

ये एक बार जन्म की पीड़ा के अनुभव में अपने के लिए वह समय अपने ज्ञान को होरोफार्म द्वारा चेहरा करना सिखाया। चेहरा हो जाने से पीड़ा के अनुभव से तो अवश्य बचाव हो जाता है परन्तु इस का प्रभाव शरीर पर अत्यन्त भयंकर पड़ता है। होरोफार्म का व्यवहार सब अवस्थाओं में किया भी नहीं जा सकता और जब प्रसव से कई दिन पूर्व से ही भयंकर मन्त्रणा के अनुभव होने लगता है तब होरोफार्म का व्यवहार भी कुछ फलदायी नहीं कर सकता।

डा० एलिज स्टॉकहम (Dr. Alice Stockham) टोकोलॉजी (Tokology) में लिखते हैं कि कठों और भावों के भोजन से प्रसव काल में बिल्कुल पीड़ा नहीं होती। बच्चा इस से बहुतों के लिए पर्याप्त मात्र में पीड़ा कम हो जाती है और प्रसव काल पर्याप्त कष्ट रहित हो जाता है तो भी यदि बालक का सिर अस्थिद्वार (hony arch) से अपेक्षा कृत बड़ा हो तो पीड़ा से किसी प्रकार छुटकारा हो ही नहीं सकता।

कुछ लोग गर्भावस्था में अफीम सेवन करने का परामर्श भी देते हैं। हम सर्वथा इस के विरुद्ध हैं। प्रथम तो अत्यन्त आसुत श्मियों पर इस का कुछ प्रभाव ही नहीं पड़ता और यदि पीड़ा के अनुभव में कुछ कमी हो भी सके तो यह बुरी आदत बचपन में सदा के लिए कष्ट का कारण बन जाती है। सन्तान पर भी इस का प्रभाव बहुत भयंकर होता है।

प्रसव की असहायता से बचने का एक और उपाय भी है वह है पेट पीर कर बच्चे को निकालना। कुछ श्मियों के लिए जिन का अस्थिद्वार बहुत छोटा होता है, यदि वे जीता बच्चा

यै एक बार प्रसव की पीड़ा के अनुभव से बचने के लिए उस समय अपने आप को छोरोफार्म द्वारा बेहोरा करवा लिया था। बेहोरा हो जाने से पीड़ा के अनुभव से तो अवश्य बचाव हो जाता है परन्तु इस का प्रभाव शरीर पर अत्यन्त भयंकर पड़ता है। छोरोफार्म का व्यवहार सब अवस्थाओं में किया भी नहीं जा सकता और जब प्रसव से कई दिन पूर्व से ही भयंकर यन्त्रणा का अनुभव होने लगता है तब छोरोफार्म का व्यवहार भी कुछ सहायता नहीं कर सकता।

डा० एलिस स्टॉकहम (Dr. Alice Stockham) टोकोलॉजी (Tokology) में लिखते हैं कि फलों और चाबलों के भोजन से प्रसव काल में बिल्कुल पीड़ा नहीं होती। यद्यपि इस से बहुतों के लिए पर्याप्त मात्र में पीड़ा कम हो जाती है, और प्रसव काल पर्याप्त बल्लेरा रहित हो जाता है तो भी यदि बालक का सिर अस्थिद्वार (bony arch) से अपेक्षा कृत बड़ा हो तो पीड़ा से किसी प्रकार छुटकारा हो ही नहीं सकता।

कुछ लोग गर्भावस्था में अफीम सेवन करने का परामर्श भी देते हैं। हम सर्वथा इस के विरुद्ध हैं। प्रथम तो अत्यन्त आधुनिक विधियों पर इस का कुछ प्रभाव ही नहीं पड़ता और यदि पीड़ा के अनुभव में कुछ कमी हो भी सके तो यह बुरी आवृत्त अविध्य में सदा के लिए कष्ट का कारण बन जाती है। संतान पर भी इस का प्रभाव बहुत भयंकर होता है।

प्रसव की असह्यपीड़ा से बचने का एक और उपाय भी है, वह है पेट पीर कर बच्चे को निकालना। कुछ विधियों के लिए जिन का अस्थिद्वार बहुत छोटा होता है, यदि वे जीता बच्चा

इस जेनों की यह निराधार धारणा है कि यदि माता को प्रसव काल में असह्य वेदना न हो तो सन्तान के प्रति उस का स्नेह कतन प्रबल नहीं होगा। कोई भी विचारशील व्यक्ति ऐसी बेवृद्धा बात पर विश्वास नहीं कर सकता। सन्तान के प्रति माता का स्नेह सन्तान के लिए इच्छा और उत्कट प्रतीक्षा पर निर्भर है न कि उस की प्राप्ति में बाधा स्वरूप यंत्रणा पर। इस के विपरीत ऐसे अनेक उदाहरण उपस्थित किये जा सकते हैं जहाँ कि माता ने यंत्रणा के मय से सन्तान की इच्छा ही छोड़ दी है।

परिशिष्ट ग

प्रसव की तिथि की गणना के तरीके।

प्रजनन शास्त्र के नामी विद्वान् फ्रैंज केबिल (Franz Keibel) और फ्रैंकलिन पी. माल (Franklin P. Mall) ने ई० १९१० में लिखा था—

“प्राचीन काल में सर्व साधारण का यह विश्वास था कि अनुष्यों में पशुओं की भांति गर्भ का कोई निश्चित समय नहीं है। सत्रहवीं शताब्दी में फिडेली (Fidele) ने सब से पहले निश्चित और पर यह कहा कि अन्तिम मासिक धर्म से ले कर पूरे चालीस सप्ताह तक बच्चा गर्भ में रहता है। अगली शताब्दी में डाक्टर हालर (Haller) ने यह पता लगाया कि यदि गर्भस्थिति गर्भाधान के समय ही हो जाय तो गर्भावस्था साधारणतः उनतालीस सप्ताह तक और कभी कभी चालीस सप्ताह तक रहती है। इस के

काल) का पड़ेगी परन्तु यदि दिन गणना गर्भाधान के दिन से की जाय तो प्रसव की तिथि २६९ दिन पश्चात् आयेगी। विवाह के बाद इस मास के अन्तर उत्पन्न होने वाली अनेक सन्तानों का उदाहरण ले कर देखा गया है कि सब से अधिक प्रसव मासिक धर्म के २७५ दिन पश्चात् हुए हैं इस में ५-६ दिन का अन्तर दे देने से ठीक २६९ आता है। दूसरा नम्बर है २७३ दिन बाजों का उस में भी ५-४ दिन का अन्तर दे देने से हिसाब पूरा पतर आता है। अनेक बार डाक्टर या वार्ड की अपेक्षा स्वयं माता अपने प्रसव दिन का अनुमान अधिक ठीक लगा सकती है यदि उसे गर्भाधान की तिथि स्मरण हो।

डाक्टर मेरी स्टोप्स को एक संक्षी लिखती हैं कि उन्हें सदा अपनी सन्तान की प्रसव तिथि का ठीक ठीक अनुमान हो जाता है। उस का तरीका उन्होंने यह लिखा है कि जिस दिन मासिक धर्म के पश्चात् गर्भाधान किया जाय उस दिन बायरी पर निशान कर दिया यदि अगला मास मासिक धर्म न हो तो उस तिथि से ठीक २६९ दिन पश्चात् प्रसव होगा।

हम नीचे डाक्टर चावसी (Chavasse) की टेबल देते हैं उस में डाक्टर चावसी ने प्रत्येक मास को पंद्रह तिथि को मासिक धर्म की अन्तिम मान कर पांच चार अथवा तीन या दो दिन का अन्तर दे कर प्रसव का समय गिना है। उस में अपनी अवस्था के अनुसार कुछ घटा बढ़ा कर संभी के लिए दिन गिन लेना आसान है। उदाहरणतः यदि एक जनवरी को मासिक धर्म प अन्तिम तिथि समझ लिया जाय और ५-४ दिन गर्भाधान

